४. विराट् प्रथमेश: अनेक दृष्टियां

विराट् प्रथमेश : अनेक दृष्टियाँ

भगवद्विभूति -संपन्न महापुरुष

-गोस्वामी वागीशकुमारजी, कांकरोली बड़ौदा

यद्यद्विभूतिमत्सत्त्वं श्रीमदूर्जितमेव वा ।
तत्तदेवावगच्छ त्वं मम तेजोंशतभवम् ।।

(गीता १०-४१)

Know that all beautiful glorious and mighty creations spring from but a spark of my splendour.

अर्थात् , हे अर्जुन ! जो -जो भी तुझे विभूतियुक्त या ऐश्वर्य युक्त या कांतियुक्त अथवा शोभायुक्त दिखता है उसे तू मेरे तेज से उद्भव हुआ जान ।

श्रीमद्भगवद्गीता मनुष्य मात्र के जीवन की सार्थकता के लिये बेजोड़ तत्व ज्ञान का ग्रंथ है । उसमें जब अर्जुन किंकर्तव्यविमूढ़ होकर भगवान् की शरण को अपनी बुद्धि के सारथी के रूप में स्वीकार करता है, तब भगवान् भी शरणागत भक्त को मनुष्य जीवन का चरम रहस्य समझाते हैं । परन्तु अर्जुन ये सब बातें नहीं समझ पाता है और कहता है कि मुझे सुगम बात कहो जिससे मैं आपके स्वरूप को सरलता से पहचान सकूँ । भगवान बड़े दयालु हैं । उन्होंने करुणावश होकर स्वभक्त अर्जुन को विभूति के दर्शन के लिये एक छोटा सा लक्षण बताया और कहा कि ये लक्षण जहाँ-जहाँ भी हों तो समझना कि ये मेरी विभूति है ।

यहाँ पर ही स्वयं प्रभु ने अपने दर्शन की चाबी स्वयम् ही अपने भक्तों को दे दी है। प्रभु ने अपने रूप की गुप्त बात भी शरणागत भक्तों को कही और प्रभु का सर्वात्म भाव कैसे प्राप्त हो यह भी बताया है ।

“ भगवान स्वयम् कहते हैं कि हे पार्थ !मेरी विभूति का पार नहीं है । मैं एक अंश मात्र से सारे जगत को धारण कर रहा हूँ । मैंने जो मेरी महिमा बताई है उससे अनंत अथवा अतिविशेष है । उस महिमा को समझने में तेरी बुद्धि थक जाती है, इसलिए संक्षेप में कहता हूँ । ”

कितना सरल और कितना सुंदर दर्शन कराया । मानव ईश्वर को स्वीकार करे या न करे । अपने आप को आस्तिक या नास्तिक माने परन्तु नजर के सामने असाधारण प्रतिभायुक्त तेजस्वी पुरुष देखता है, तब उसके सम्मुख अपना व्यक्तित्व गौण होने के कारण मस्तक नमाकर बड़ी नम्रता से उस तेजस्वी पुरुष का दर्शन कर अपने आप को धन्य अनुभव करता है । ऐसे ही तेजस्वी , प्रतिभाशाली और विभूति-संपन्न महापुरुष पूज्यपाद गो. श्री १०८ श्री प्रथमेशजी महाराज (कोटा -जतिपुरा) थे ।

पूज्य श्री की बुद्धि तीक्ष्ण थी और बहुत ही जल्दी सार ग्रहण करती थी और बात

करने वाला बात पूरी करे उसके पहले ही आपकी कहने का आशय समझकर एक वाक्य में ही उसका सार कह देते थे । इतना ही नहीं , प्रश्न का निरूपण करके निराकरण भी कर देते थे । जिन भगवदीय वैष्णवों को या सामान्य जीवों को उनसे बात करने का अवसर मिला है , वो सभी उनकी बुद्धिमत्ता , सहृदयता और कुशाग्रबुद्धि से आश्चर्यचकित हो जाते थे । पूज्यश्री साहित्य, संगीत, कला जैसे अनेक क्षेत्रों में अपनी अलग ही छाप रखते थे । आपका स्वभाव सारग्राही था । आप व्यर्थ की बातों में अपना समय गवाँना नहीं चाहते थे । प्रश्न निरूपण करके निराकरण भी कर देते थे । जिन भगवदीय वैष्णवों को या सामान्य जीवों को उनसे बात करने का अवसर मिला है, वो सभी उनकी बुद्धिमत्ता, सहृदयता और कुशाग्रबुद्धि से आश्चर्यचकित हो जाते थे । पूज्यश्री साहित्य, संगीत, कला जैसे क्षेत्रों में अपनी अलग छाप रखते थे । आपका स्वभाव सारग्राही था । आप व्यर्थ की बातों में अपना समय गवाँना नहीं चाहते थे । प्रश्न का जवाब देकर मौन हो जाते थे। आपसे एक बार जो भी मिलता था,वह स्वयं को धन्य और भक्तिमय पाता था ।

आपसे सलाह लेने वालों को आप सही ,उचित और जमाने के अनुरूप सलाह देते थे । आपके साथ वार्तालाप करनेवाले को लगता था कि आप सचमुच आत्मीयजन हैं । आप एक समुद्र थे, जैसा व्यक्ति जो भी प्रश्न करे उसी प्रकार का समाधान होता था । जैसा कोई कानूनी प्रश्न हो या राजनीतिक, ऐतिहासिक, दार्शनिक, सांप्रदायिक या सनातन धर्म का कोई भी प्रश्न हो तो आप बहुत ही सुन्दर मार्गदर्शन प्रदान करते थे ।

आपकी एक विशेषता थी कि व्यक्ति छोटा हो या बड़ा सभी को "आप" का संवोधन देते थे । श्री महाप्रभुजी के सिद्धांत पालन करके आप ने सारे विश्व को बताया है कि पुष्टिमार्ग क्या है ?शुद्धाद्वैत क्या है ? धर्म क्या है ? पुष्टिमार्गीय अन्य आचार्य भी आपकी वहुमुखी प्रतिभा को देखकर अपने आप को गौरवान्वित समझते हैं । पुष्टिमार्ग की जो सेवा श्री प्रथमेशजी महाराज ने की है , वह अवर्णनीय और प्रशंसनीय है । कुंभ का जो कार्य आपने किया है , वह पुष्टिमार्ग को सनातन धर्म एक महत्वपूर्ण स्थान दिलाकर भक्ति-सिद्धान्त मतानुयायियों के बताया है , कि शुद्धाद्वैत भक्ति का श्रेष्ठ और उत्तम मार्ग है और उसी के द्वारा सेवोपयोगी देह की प्राप्ति होती है । आपकी आंतरिक सत्यनिष्ठा सिद्धांत पालन के लिये निडर होकर अपने विरोधियों का मुकावला करने की शक्ति देती थी ।

आपके जीवन -साफल्य का मुख्य कारण नियमानुसार काम करने की आदत , अनुशासनप्रियता सत्यपरायणता, दयालुता, समय के योग्य वचन और व्यक्ति की परीक्षा करने की शक्ति थी ।

प्रथम दृष्टि में आप बहुत कठोर स्वभाव के लगते थे । परन्तु वास्तव में आप बहुत ही कोमल स्वभाव के थे । आप श्री जैसी निष्पक्ष सलाह देने वाले और हिम्मत से काम करने वाले व्यक्ति बहुत ही कम देखने में आते हैं ।

पूज्यपाद गो. श्री प्रथमेश जी का नित्यलीला प्रवेश संप्रदाय के लिये और भारतीय समाज के लिये वड़ा ही आघात का समय था । परन्तु आप ने जो सद्कार्य किये हैं ,वे संप्रदाय को उनकी याद दिलाने में और उनके स्मरण को चिरस्थायी वनाने में सक्षम सिद्ध होंगे ,ऐसी मुझे आशा है ।

श्री पुष्टि पुरूषोत्तम

श्री गंगादासजी रघुनाथजी साँचीहर
(श्री नाथजी के बड़े मुखिया)

अनंत कोटि ब्रम्हाण्डनायक पूर्णव्रह्म सच्चिदानंद श्री कृष्ण समय-समय पर अनेक रूपों से अवतरित होकर भक्तों की रक्षाकर लीला सुखानुभव देते रहे हैं । जगद्गुरू वल्लभमहाप्रभु ही पूर्ण पुरुषोत्तम वदनावतार रूप से प्रभु श्रीकृष्ण नंदराज कुमार रूप से अवतरित हुए । उनका वंश भी -''स्ववंशेस्थापिता शेषस्वमहात्म्यस्मया पहं '' -रूप आपका वंश भी तद्रूप ही है । इस संप्रदाय में सात पीठ , सात गादी रूप हैं , इसमें प्रथम गिरधरजी के वंश में तेरहवीं पीढ़ी में श्री रणछोड़ाचार्य जी आते हैं ।

यह स्वरूप पुष्टि पुरूषोत्तम ही थे, जो सकलकलानिष्णा , सकल गुण सम्पन्न, सकलशास्त्रपारंगत , सकलविद्याभाषा के पूर्ण ज्ञाता तथा कृपावत्सल , भक्तवत्सल ,स्नेह की प्रतिमूर्ति एवं व्यवहारकुशल नीतिज्ञ महाराज थे । यों तो गोस्वामी श्री रणछोड़लालजी महाराज के दर्शन का सौभाग्य नाथद्वारा में कई वार प्राप्त होता रहा । सेवा में कई विभागों में होने से जब-जब आप पधारते तब-तब आपकी सेवा का मुझे सौभाग्य मिलता था परन्तु जतीपुरा में वर्तमान गोस्वामीतिलक पूज्यपाद गोविन्दलालजी महाराज के उभय कुमारों के उपनयन में सुरभिकुण्ड पर छप्पन भोग के समय श्रीगिरिराजजी के शृंगार करने महाराज श्री प्रथमेश पधारे तब लगातार छः-सात घण्टे उनके समीप रहने, वार्तालाप करने का सुअवसर मिला । मेरी सेवापटुता देखकर आपने आशीर्वाद स्वरूप आज्ञा की ''तुम तो श्रीजी के वड़े मुख्य पद को प्राप्त करोगे ''। उनकी कृपा और आशीर्वाद से आज जो कुछ भी है वह उनके वचनामृत का सार्थक प्रसाद है ।

मैं आपको पुष्टिपुरुषोत्तम मान वैठा । वह इस प्रकार सार्थक है --पुष्टि के कई भेद विद्वानलोग वताते हैं । कृपा पुष्टि, रक्षा पुष्टि, आदि । कृपा पुष्टि इस प्रकार ठीक वैठती है -- सुना गया है कि जतीपुरा में आपको प्रादुर्भाव के समय श्रीमथुराधीश मन्दिर के प्रागंण में प्रसूतिगृह जाते हुए रंजित छोटे-छोटे युगल चरणों के दर्शन हुए । इससे मैं यह मानता हूँ कि आप कृपा पुष्टि स्वरूप ही प्रकटे थे ।

पुष्टिकालादि वाधिका यह प्रभु के मुख की सिद्धि है - जिसमें प्रवेश करते है वह पुष्टि हो जाती हैं । वहाँ कालादि की वाधा नहीं है । कालादि उसे उल्लंघन नहीं कर सकते ।

कृपा पुष्टि अलौकिक सामर्थ है । इससे आप पुष्टि रूप हुए । पुरुषोत्तम - पुरुषेषु उत्तमः पुरुषोत्तमः । आप सब विधि उत्तम पुरुष रूप साक्षात् मथुराधीश स्वरूप बोलते थे । आपने अनेक ऐसे नये चरित्र किये जो साधारण मानव की सामर्थ्य में नहीं हैं । जैसे कुम्भ के मेलों में आपने विष्णुस्वामी सम्प्रदाय प्रवर्तक बनकर -- वल्लभाचार्य नगर बनाकर सर्वप्रथम शोभायात्रा लेकर असंख्य वैष्णवों के साथ स्नान किया जो भक्ति मार्गीय आचार्यों के समान सर्वत्र जय-जय कार कराकर पुष्टि पताका फहराई और वहाँ एक मास उस स्थान में रहकर सेवा-भक्ति, वैष्णव कर्तव्य तथा शुद्धाद्वैत दर्शन का ज्ञान प्राप्त कराने में अग्रणी रहे तथा अनेक विद्वान आचार्य भक्तों को सम्प्रदाय क्या है । यह बता दिया। ऐसे अनेक चरित्र आपने किये ।

आपने पुष्टिमार्गीय वैष्णव परिषद् को सशक्त बनाने, आदिवासिओं के उत्थान, विश्वहिन्दू परिषद् के मार्गदर्शन, गोवध निषेध आंदोलन आदि में आपने तन-मन-धन से कार्य किया । इतना ही नहीं भगवान की रक्षा पुष्टि की अलौकिक रीति के समान आपने समाज के हर वर्ग पर अनुग्रह की दृष्टि रखकर, अपने स्वास्थ्य को भी चिन्ता नहीं करते हुए जीवन के अंतिम क्षण तक सर्वात्म भाव रखते हुए सेवा की ।

संवत् २०२३ में नाथद्वारा में श्रावण मास में सात-स्वरूप का उत्सव हुआ तब मैं बड़े मुखिया के पद पर सेवारत था, तब मैंने आपश्री से पूछा कि जब गोकुल से श्री गोकुलनाथजी और कोटा से मथुराधीश जी पधारें नहीं हैं तब यह सात स्वरूप कैसे माने जाय, इस पर आपश्री ने आज्ञा की कि यह सात स्वरूपोत्सव हैं, न कि सप्तनिधि महोत्सव। आपने निम्नलिखित पद का उदाहरण देकर समझाया था :--

विहरत सातों रूपधरे

सदाप्रसन्न श्रीवल्लभनन्दन द्विज कुल भक्त करे ।

श्री गिरधरराजाधिराज ब्रज राज उद्योत करें

श्री गोविन्द इन्दु जग किरननि सींचत सुधा अधरें ।

श्री बालकृष्ण लोचन विशाल देखत मनमथ कोटि डरे

गुणलावण्य दयाल करुणानिधि गोकुलनाथ भरें ।

श्री रघुपति यदुपति धनसांवल मुनिजन शरण परें ।

छीतस्वामि गिरिधरन श्री विट्ठल जिहि भज अखिल तरे ।

आपश्री ने स्पष्ट किया कि इस पद में ठाकुरजी के निधि स्वरूपों के नाम नहीं हैं, श्री गुसाईंजी के सातों बालकों को ही सात स्वरूप माना गया है । मथुरा में सत धरा हैं। उसमें भी यही भाव है । इस प्रकार आपश्री ने मेरी शंका का समुचित समाधान किया ।

आपश्री के वंश में तीन रणछोड़लालजी हुए । प्रथम रणछोड़लालजी तामस जिनका प्राकट्य विक्रम संवत् १६७७ में हुआ । दूसरे सात्विक जिनका प्राकट्य १६०७ में हुआ।

तीसरे राजस आपश्री विक्रम संवत् १६८६ में प्रकट हुए । आपने राजस युक्त कई कार्य किये । उद्भट विद्वत्ता शास्त्रार्थ में सभी को निरुत्तर कर देना अन्य सम्प्रदायों के आचार्यों के द्वारा भी वल्लभ सम्प्रदाय की महत्ता स्वीकार करवाना आपके राजस कर्म का ही द्योतक हैं ।

मेरे जैसे अनेक आस्तिकों की दृष्टि में आपश्री साक्षात डाकोर के रणछोड़राय थे जो मानव लीला करते हुए भक्तों के सभी मनोरथ पूर्ण करते थे ।

विलक्षण व्यक्तित्व

श्री नन्दलाल न्याती, कोटा (राज.)

ईसा की वर्तमान बीसवीं सदी के महानतम आचार्यों में से एक हैं श्रीमद् अखण्ड भूमण्डलाचार्यवर्य जगद्गुरु श्री वल्लभाचार्यजी के वंशज गोस्वामी श्री रणछोड़चार्य महाराजश्री - श्री प्रथमेश जी - जिन्होंने अपनी मेधावी प्रखरता, वेदशास्त्रों का सूक्ष्म अध्ययन, दार्शनिक वक्तृत्वशक्ति, कर्मठता, विविध कलाओं में अपनी पटुता और उदारता, एवं मानव दृष्टिकोण आदि सद्गुणों से पूर्ण अपने विलक्षण व्यक्तित्व एवं कृतित्व से जनता जनार्दन के हृदयों में अपना अनुपम स्थान बनाया है ।

व्यक्तित्व :-- अच्छा-लंवा कद, मोटा-तगड़ा श्री अंग, ओजस्वी तेजपूर्ण चाल आदि तो आपश्री के व्यक्तित्व को प्रभु की देन थी ही । आपश्री ने अपने आचार्यत्व के आरंभ से ही श्री महाप्रभु वल्लभाचार्य का अनुसरण करते हुए मात्र थोती उपरना में ही सदा रहने का अपना दृढ़ संकल्प भी रक्खा । कड़ाके के जाड़े में जरुर आपश्री अंगरखी पहिन लेते थे और शाल ओढ़ लेते थे ।

परिषद्-संगठन :-- आपश्री ने पुष्टिमार्ग के यथार्थ स्वरूप को वैष्णवों को समझाने, उसके प्रचार-प्रसार करने एवं श्री वल्लभाचार्य के सिद्धांतों को जन-जन तक पहुंचाने की और आज के समय में उन पर आचरण करने की परम आवश्यकता एवं उपयोगिता को वताने आदि कार्यों को अपनी जीवन-लीलाओं में प्रमुखता देने का लक्ष्य सदैव अपने सम्मुख रखा । इस लक्ष्य पूर्ति हेतु पुष्टिमार्गीय वैष्णवों को पुष्टि-ध्वज के तले पूर्णरूप से संगठित होने का आह्वान किया । इसलिये आपश्री ने वैष्णव परिषद को अधिक व्यापक वनाने की ओर ध्यान दिया । संस्था का मोड़ मानव कल्याणकारी कार्य करने की ओर भी दिया गया।

सोमयज्ञ :-- श्रीप्रथमेशजी ने इस वैदिक, सोमयज्ञ परम्परा को पुष्टिमार्ग में पुनः प्रारंभ किया । यज्ञ-अनुष्ठान अवधि में जन-जन तक श्री वल्लभ के सिद्धांतों के कार्यकर्ताओं की

विभिन्न स्तरों पर बैठकें और अधिवेशन भी आयोजित किये । इसी प्रकार सोमयज्ञ अनुष्ठान धर्म-जागरण के भी सफल एवं रोचक माध्यम बन गए । इसका सारा श्रेय आपश्री की विलक्षण सूझबूझ, कृपा एवं कृतित्व को ही जाता है ।

कुम्भ-पर्व एवं श्री वल्लभाचार्य नगर-निर्माण :-- कुम्भ पर्वों पर आपश्री ने शिविर रूप में श्री वल्लभाचार्य नगर निर्माण करवा कर वैष्णव जीवन और संगठन का सही स्वरूप वैष्णवों को सिखाया । आपश्री की इस अद्भुत सूझबूझ, कर्मठता और कृतित्व की वैष्णवों पर सदैव के लिए छाप रहेगी और उन्हें भावी मार्ग-दर्शन मिलता रहेगा ।

संस्कार शिविर :-- आपश्री की प्रेरणा और कृपा से ही भारत के विभिन्न स्थानों में संस्कार शिविर आयोजित हुए, जो वैष्णव परिवार के बालक एवं बालिकाओं में धार्मिक संस्कार डालने एवं उन्हें हिन्दू धर्म का सामान्य ज्ञान एवं पुष्टिमार्ग का विशेष ज्ञान देने तथा पुष्टि साहित्य प्रचार में अत्यधिक उपादेय सिद्ध हुए ।

क्षेत्रीय सम्मेलन :-- भारत के विभिन्न स्थानों में क्षेत्रीय सम्मेलनों का आयोजन प्रारंभ करवा कर आपश्री ने परिषद् के कार्यों को अधिक गति दी और स्थान-स्थान की विभिन्न परिषद् शाखाओं को जिला स्तर पर संगठित करते हुए वैष्णवों में अपूर्व जागृति पैदा की।

महिला संगठन :-- आपश्री की कृपा और प्रेरणा का ही फल है कि भारत के विभिन्न स्थानों में जगह-जगह पर महिला संगठन भी बन गए, जिनके दैनिक सत्संग कार्यक्रम चलते रहते हैं और इस प्रकार परिषद् की महिला सदस्य संख्या में वृद्धि तो होती ही है, उनमें भी धार्मिक संगठन के प्रति अत्यधिक जागृति होती जा रही है ।

आदिवासियों, जनजातियों का विकास :-- आपश्री ने आदिवासियों एवं जनजातियों के विकास की ओर भी स्थान दिया । मध्यप्रदेश के झाबुआ जिले में आदिवासी बालक एवं बालिकाओं की शिक्षा व कल्याण के लिये विद्यालय स्थापित किये और उनके निःशुल्क पठन-पाठन का समुचित प्रबंध किया ।

क्रांतिकारी धर्माचार्य के रूप में आपके विचार :-- यह निर्विवाद है कि श्रीप्रथमेशजी एक क्रांतिकारी धर्माचार्य रहे । आपश्री ने संकुचित दृष्टिकोण नहीं रखा । आपश्री की आज्ञा थी - किसी को बुरा लगे, ऐसा वचन न बोलें और अहितकर कार्य कभी न करें । इस प्रकार का मानव-धर्माचरण वैष्णव धर्माचरण के लिए नितांत आवश्यक है । आपश्री की दृष्टि में ब्राह्मण, यवन, शूद्र, स्त्री, पुरुष सभी समान हैं ।

आपश्री सदैव आज्ञा करते थे -- ''परिषद् का प्रत्येक कार्य भगवद् सेवा है । परिषद् संगठन के लिए प्रत्येक वैष्णव को स्वेच्छा से आगे आना चाहिये और संस्था के अलौकिक कार्य को भगवद्-सेवा मानकर करना चाहिये । सेवा माँगी नहीं जाती, स्वयं खोज ली जाती है । कोई कामना अथवा अपेक्षा लेकर परिषद् में न आवें और न ही कार्य करने का अहंकार हो । भगवद् कार्य न कर पाने का लोभ अवश्य होना चाहिये । पुष्टि मार्ग

५०० वर्षों से स्वधर्मचरण की दृढ़ता एवं त्याग के बल पर ही टिका है । यदि किसी को धर्म के लिए अवकाश नहीं हैं तो उसके लिए भगवान को भी फुरसत नहीं है । धर्म के प्रति स्वकर्तव्य का पालन करने से भगवान स्वयं चले आते हैं और उस व्यक्ति का वरण करते हैं । पुष्टि भक्ति अनुग्रहात्मक भक्ति ही है ।''

इन्हीं भावनाओं से आपश्री नित्य परिस्कार का पथ प्रशस्त करते रहे हैं ।

इस प्रकार श्री प्रथमेशजी वर्तमान शताब्दी के महानतम एवं क्रांतिकारी धर्माचार्य के रूप में जन-जन को सदैव स्मरण होते रहेंगे और उनके दिव्य अलौकिक विचार एवं वचनामृत हम सबका सदैव मार्गदर्शन करते रहेंगे ।

आपश्री के अन्तरंग भक्तों से तो यह भी सुनने को मिला है कि आपश्री ने उन्हें महाप्रभु श्री वल्लभ के रूप में दर्शन भी दिये हैं ।

अग्नि शमन करने का भी चमत्कार दिखाया है । कहीँ श्री वल्लभ ने ही तो समय की आवश्यकता जान श्री प्रथमेशजी के रूप में पुनः प्राकट्य तो नहीं ले लिया । प्रभु लीला में सब कुछ संभव हैं । कई बार आपश्री मथुराधीश जी के दर्शन के समय कीर्तन मण्डली के संग वादन लीला करते हुए मस्त हो जाते थे और अपने स्वरूप को भूल मण्डली के साथ घुलमिल जाते थे । आपश्री के चरित्र में यथार्वतः एक अद्वितीयता की अनुभूति होती थी ।

औषधि शास्त्र में आपका पूर्ण दखल था और कई व्यक्ति अपने रोग निवारण हेतु आपश्री से ही नुस्खा लिखवाते थे और उन्हें रोग से छुटकारा मिल जाता था । विद्वानों, पंडितों का यथोचित सम्मान और उन्हें उचित आसन पर बैठने की आज्ञा करना, दयालुता एवं परोपकारिता आदि सद्गुणों के भी आपश्री भण्डार थे । किसी भी प्रकार के विषय पर आपश्री के सम्मुख चर्चा छेड़ दी जाती तो आप साधिकार इस पर बातचीत करते थे। इस प्रकार की सर्वज्ञता आपश्री में भरपूर थी । जो भी आपश्री के सम्पर्क में आता, आपके व्यक्तित्व की छाप उस पर अवश्य पड़ती थी ।

ऐसे अनन्त गुणों एवं लीलाओं से समन्वित आपश्री के विलक्षण एवं अद्वितीय व्यक्तित्व एवं कृतित्व के विषय में किसकी सामर्थ्य है कि पर्याप्त प्रकाश डाल सके एवं पूर्ण संतोष कर सके । आपश्री की कृपा से ही थोड़ा बहुत सम्भव हो सकता है ।

सम्प्रदाय के समर्थ हितचिन्तक

श्री प्रद्युम्न शास्त्री, बड़ौदा

आचार्य गरिमा --- नि.लि.पू.पा.गो.श्री १०८ श्री रणछोड़ाचार्यजी प्रथमेशजी आचार्य परंपरा में सूर्य समान तेजस्वी परम प्रतापी निर्भय स्वयं विद्या के महासागर होते हुए भी

विद्वानों के अनुरागी और हृदय से आदरकर्ता थे । सम्प्रदाय के कठिन से कठिन सिद्धान्तों को आप अतिमधुर सरल भाषा में समझाते थे । आप संप्रदाय का विराट् व्यक्तित्व थे ।

विद्वद् जनानुराग --- मेरे ऊपर आपकी कृपा पूज्य गो.वा. श्री बदरीनाथ शास्त्री के समय से रही है । शास्त्रीय विषयों की चर्चा घंटों तक आप करते थे । सोमयज्ञ की परंपरा को शुरु करने से पूर्व बदरीनाथ शास्त्रीजी से आपने बहुत चर्चा यज्ञ विषय की थी। यज्ञ के प्रकार पशु पिष्टपशु में क्या अन्तर है, सपशु ही याग होता है कि अपशुयाग होता है ? यह चर्चा विषय रहता था । बदरीनाथ शास्त्रीजी का एक मन्तव्य था कि अपशुयाह की भी परंपरा है, किन्तु इसका पुरास्वरूप बताने से पहले ही शास्त्री जी गोलोक वासी हो गये ।

संस्कृत-समादर --- बड़ोदा की संस्कृत विद्वत्सभा के द्वारा गुर्जराज्य संस्कृत सम्मेलन का आयोजन बड़ोदा में १९९० में हुआ था । उसमें आप विशिष्ट धर्माचार्य के रूप में आमन्त्रित किये गये थे । उस सम्मेलन में शास्त्री का समन्वय पूर्ण अस्तलित विशुद्ध संस्कृत भाषा में प्रवचन प्रवाह बहा था उसे सुनकर वहाँ समुपस्थित विद्वद्गुण आचार्यगण - अधिकारी शासक वर्ग सभी मन्त्रमुग्ध हो गये थे ।

अनुपम आतिथ्य --- एक समय किसी के निमन्त्रण से हम जतिपुरा सपरिवार गये थे । किन्तु वहाँ किसी ने हमको भोजन के लिए नहीं पूछा था किन्तु जब हमने जाना कि प्रथमेशजी यहाँ विराज रहे हैं तो हम पूज्य महाराज श्री को प्रणाम करने को गये, तब आपने आत्मीयता से पूछा कि शास्त्रीजी आपके भोजन की व्यवस्था क्या है । मैंने कहा कि आप चिन्ता न करें कहीं न कहीं व्यवस्था हो जायेगी । तब आपने आज्ञा की कि आप जितने भी व्यक्ति हैं और यहाँ जितने दिन रहें मेरे यहाँ ही प्रसाद लेवें । आपको और कहीं व्यवस्था नहीं करनी हैं । कभी-कभी विलंब हो जाता तो आप प्रसाद लेने में प्रतीक्षा करते थे । हम तो आपके समक्ष छोटे थे फिर भी इतना आदर करते थे यह थी आप की महानुभावता । यह सबका अनुभव है कि कोई भी व्यक्ति आप के वहाँ से भूखा प्यासा निराश नहीं लौटता था ।

भगवनिष्ठा युक्त कुम्भपर्व के तपस्वी आचार्य

कुम्भ पर्व के आचार्यवाडा में श्री वल्लभाचार्य के सम्प्रदाय का नामो निशान कई वर्षों से नहीं था । किन्तु महाराज श्री ने सबल ऐतिहासिक प्रमाण प्रस्तुत कर बड़ा प्रयत्न करके वहाँ श्री वल्लभाचार्य नगर की स्थापना की और जीवन पर्यन्त उस स्थान को गौरवान्वित करते रहे । आपकी यह भावना रही कि सभी गौस्वामी महाराज इसमें सम्मिलित हों । १९८८ में प्रयाग में कुम्भ पर्व था । उस समय परिस्थिति वश ऐसा निर्णय वैष्णव परिषद् करने जा रही थी । प्रयाग के कुम्भ पर्व में श्री वल्लभाचार्य का आयोजन करना मुश्किल है, किन्तु महाराज श्री ने कहा कि मेरा स्वास्थ्य ठीक नहीं है फिर भी जरूर जाऊँगा और श्री वल्लभाचार्य सम्प्रदाय का स्थान मैंने कितनी मुश्किल से संपादन किया है, वह मैं

जानता हूँ । तव कलकत्ता के मोदीजी ने आदि वैष्णवों के सहयोग से परिषद् द्वारा श्री वल्लभाचार्य नगर का सुन्दर आयोजन किया गया था । उन भयंकर ठंड के दिनों में आप युगल स्वरूप वहाँ एक मास विराजे । पू. महाराज श्री की आज्ञा से वहाँ प्रवचन के लिये गया था । एक समय महाराज श्री के शिविर में विद्वान बैठे थे । वहाँ चर्चा चली की "स्वधर्माचरण शक्तिया विधर्माच्च निवर्तनम् । स्वधर्म का आचरण स्वशक्ति अनुसार करना तो स्वधर्म का आचरण क्या शक्तियों से अधिक बताया गया है या स्वधर्म का पालन शक्ति अनुसार करें । इस बिन्दु पर विस्तृत चर्चा हुई । आपके सान्निध्य ऐसा शास्त्रचर्चा प्रायः हुआ करती थी जिससे शास्त्रों के रहस्य उद्घाटित होते थे ।

श्री भागवतनिष्ठा - भावुकता आपको हृदयरोग शान्त होने पर जब चिकित्सकों ने चलने फिरने की छुट्टी दी तब आपका फोन आया की शास्त्री जी मैं आपके स्पर्श प्रथम श्री भागवत सुनना चाहता हूँ । मैं कलकत्ता पहुँचा वहाँ मंडप वाहर खुले में तैयार किया गया था पत्रिका मुद्रित करवाकर सबको दी गई थी । उसमें आपश्री ने मेरे नाम के आगे पण्डित पंचानन छपवा दिया था। मैंने विनती कि मैं न तो ऐसा विद्वान हूँ और न पंचानन हूँ यह पदवी पू श्री वदरीनाथ शास्त्री जी की थी । तब महाराज श्री ने कहा कि यदि शास्त्री जी ऐसे नही है तो अब हो जायेंगे यह मेरा आशीर्वाद हैं ।

फिर महाराजश्री कहा कि शास्त्रीजी मैं यहां संकल्प करुँगा अभी मुझमें अशक्ति हैं अतः सीढ़ी एक ही है फिर भी चढ़ने उतरने का साहस नहीं है । भागवत जी का पूजन नीरांजन महाराज और लालन करेंगे । किन्तु जब भागवतजी का पूजन के लिए पधारे और कहा कि आप मेरे यहाँ श्री भागवतजी का प्रारंभ हो रहा हो तो पूजन करने से वंचित नहीं रह सकता । ऐसा भावपूर्ण पूजन किया कि सभी के हृदय द्रवित हो गये । अन्य धर्म को आपको दवा आदि देने के लिए जो नर्स, वहाँ थी वह भी महाराजश्री के प्रभाव वैष्णव धर्म की दीक्षा लेकर प्रतिदिन भागवत पूजन करने लगी ऐसा आपका अपूर्ण माहात्याप्रताप रहा ।

संप्रदाय के समर्थ हितचिंतक -- आप नित्यलीला में पधारे उससे सात दिन पहल में कलकत्ता शुद्धाजैन जपयज्ञसमिति द्वारा डागाधर्मशाला में काशीस्थ पू.पा. श्री शरद लुभा वेटीजी के सान्निध्य में आयोजित भागवत दशमस्कन्ध सप्ताह प्रवचन के लिए गया था । महाराजश्री कलकत्ता से जतिपुरा के प्रस्थान करने वाले थे उसके पहले दिन मैं दंडवत् प्रणाम करने के लिए महाराजश्री के पास पहुँचा तव ठंड के दिन थे । आपश्री का स्वास्थ्य ठीक नहीं था । स्नान करके पधारे थे फिर भी संप्रदाय, सेवा प्रणाली, मंदिर भावना आदि के श्रुति स्मृति के प्रमाणों और सांप्रदायिक प्रमाणों द्वारा जो चर्चा रूप से समझाते कहाँ डेढ़ घण्टा चला गया उसका पता भी न चला । मैंने निवेदन किया कि आपका स्वास्थ्य ठीक नहीं है आप इतना श्रम न करें । तव आपने कहा - ' नहीं, शास्त्रीजी यह सव आपको वताना ही है, आपको जल्दी तो नहीं हैं ?' मुझे यह ज्ञात नहीं था कि अव पुनः

ऐसा आनन्द नहीं मिलने वाला है । मैंने बड़ौदा ६ जनवरी को पधारने की विनती की । आपने स्वीकार किया बड़ौदा आने का तो - मैने पूछा आप ट्रेन अथवा प्लेन से पधारेगें? कहाँ से पधारेंगे और बड़ौदा कहा पधारेंगे ? मैं आपकी टिकिट रीझर्वेशन की व्यवस्था कर दूँ तो कहा कि शास्त्रीजी वैष्णव के आमन्त्रण से भी मैं कहीं जाता हूँ उससे भी टिकिट की आशा कभी नहीं रखता हूँ तो क्या मैं इतना गया गुजरा हूँ कि आपसे टिकिट की आशा रखूँ । सब व्यवस्था हो जायगी आप चिन्ता न करें । ये आत्मीयतापूर्ण शव्द में कभी नहीं भूलूंगा ।

वन्दनीय वाक्पति --- रामशिला पूजन की कलकत्ता में विशाल सभा का आयोजन था । वहाँ जैन बौद्ध सभी संप्रदाय के आचार्य उपस्थित थे। वहाँ पू. श्री प्रथमेशजी ने अपने प्रभावशाली प्रवचन में हिन्दुत्व की व्याख्या करते हुए कहा कि जो कोई भी इस भारतभूमि में निवास करते हैं उनके लिये वे किसी भी रूप में वेद, वैदिक संस्कृति तथा श्रीराम-कृष्ण का अस्वीकार करतार सम्भव नहीं है । फिर वह कोई भी संप्रदाय का क्यों न हो ।

परिषद् के प्राण --- अन्तर राष्ट्रीय पुष्टिमार्गीय वैष्णव परिषद् को तो महाराज श्री ने आत्मसात् कर लिया था । आपकी भावना यही रही कोई भी छोटा मोटा काम भी हो तो वह परिषद के माध्यम से ही करना चाहिये । जैसे एक वैष्णव ने हॉल आदि सुविधा न मिलने पर घर में भागवत सप्ताह का आयोजन रखा था किन्तु वहाँ भी महाराज श्री का यह आग्रह रहा कि परिषद् बोर्ड वेनर आदि लगाना चाहिये । पू.पा. श्री महाराज तथा श्री वहुजी महाराज दोनों ही पाँच-पाँच हजार की राशि देकर सर्व प्रथम परिषद के संरक्षक सदस्य वने । इतना ही नहीं किन्तु अनेक बार अपनी चरण भेंट भी परिषद को अर्पण कर देते थे ।

अनुग्रह स्वरूप अंजलि --- मुझ पर तो आपका सदैव परम अनुग्रह और आशीर्वाद रहा है । आपके पूज्य महाराज श्री के महानुभावता के संस्मरण हजारों हैं उनको याद करने पर तुरत मेरे और कई लोगों के आंख आसुँओं से छलकती है और ह्रदय वश में नही रहता । उन सवको छोटे से लेख में शव्दान्वित करने का सामर्थ्य मुझमें नहीं हैं जैसे साकार का रस माधुर्य का शव्दों में वर्णन नहीं हो सकता । नित्यलीला में विराजमान पू.पा. गो. श्री रणछोड़ चार्य प्रथमेश जी के चरणयुगल में यह संस्मरण भाव-अंजलि समर्पित करते हुये मेरे सदैव कोटि-कोटि दँडवत् प्रणाम ।

प्रद्युम्न शास्त्री (वड़ौदा) साहित्याचार्य, वेदान्ताचार्य, लव्ध सुवर्णपरक भागवत प्रवक्ता।

पुष्टि सृष्टि के देदीप्यमान सूर्य

श्री निरञ्जनजी शास्त्री उमरेठवाला
बोरीवली, बंबई. (महाराष्ट्र)

'कुलं पवित्रं जननी कृतार्था बसुन्धरा पुण्यवतीस्ति येन ।'

इस जगत् में जिसके जन्म से कुल पवित्र वने, जननी कतार्थ हो और पृथ्वी पुण्यवती वने । ऐसे महापुरुष शताब्दियों में कभी एकाध वार ही पधारते हैं । परम पूज्य वल्लभकुलभूषण स्वनामधन्य गोस्वामी श्री रणछोड़ाचार्यजी प्रथमेशजी ऐसे ही महापुरुष थे।

सम्मुख होकर भी अपरिचय --

आचार्य श्री के कतिपय प्रवचनों में मैंने श्रोता के रूप में वैठकर कई शास्त्रों का सार और पुष्टि सिद्धान्तों का श्रवण किया था किन्तु १६६६ के पूर्व श्री प्रथमेशजी से न तो निजी संपर्क हो पाया था और न कोई निजी चर्चा ही हुई । सन् १६६६ में मैं अपने विद्या गुरु पंडित पंचानन गोलोक वासी पूज्य श्री वद्रीनाथजी शास्त्री का एक पत्र लेकर पूज्य प्रथमेशजी महाराजश्री के पास लालमणि भवन गया । आप श्री संगीत चर्चा में मग्न थे । अतः न तो आपश्री ने मुझसे परिचय पूछा और न ही मैंने अपना परिचय दिया । पत्र सौंप कर मौखिक उत्तर पाकर लौट आया ।

निकटता ----

महाप्रभु वल्लभाचार्य के प्राकट्योत्सव के अवसर पर वंबी में श्री भाटिया महाजन वाडी में एक सौ साठ श्रीमद् भागवत् सप्ताह ज्ञान यज्ञ मेरे विद्या गुरु पूज्य श्री वद्रीनाथजी शास्त्र के प्रधान व्यास पद के अन्तर्गत करना निश्चित हुआ तब श्रीमद् भागवत पारायण के वरण के लिये मुझे मेरे सहाध्यायी विद्वान मित्र श्री प्रद्युम्न भाई शास्त्री ने मुझे कहा, मैंने कहा कि गुरुजी की कथा में पारायण में बैठना मेरा सौभाग्य है किन्तु मुझे पारायण में से साढ़े चार वजे निकल जाना होगा । यदि इसके लिये पूज्य श्री प्रथमेश जी की सहमति हो तो मैं पारायण में वैठ सकूँगा । पूज्य महाराज श्री ने सहर्ष उदारता पूर्वक सहमति देते हुए कहा कि निरंजन जी पारायण करके जा सकेंगे उनके लिए समय का बंधन नहीं रहेगा।

उस समय मैं फ्री प्रेस ग्रुफ के 'जन शक्ति' गुजराती दैनिक मैं 'विश्व मंगल' कालम से धार्मिक लेख लिखता था । मैं प्रतिदिन उक्त भागवत ज्ञान यज्ञ का विवरण भेज रहा था और अन्य गुजराती पत्र भी उसे छाप रहे थे । जिसे पढ़कर पूज्य महाराजश्री ने कहा -- 'पंडितजी ! आप मात्र कथाकार ही नहीं, पत्रकार भी हैं । इसलिए मुझे सचेत रहना पड़ेगा - मैंने कहा कि आपको ऐसा क्यों लगा ? आपश्री सहज भाव से हँस दिये । इसके वाद तो निरन्तर निकटता वढ़ती ही गयी ।

इ. सन् १९६६-६७ में आपश्री ने वैष्णव परिषद के अन्तर्गत संस्कृत विद्वत सभा ने वैष्णव करने का मनोरथ किया । तब मैं आपश्री को लेकर भारतीय विद्याभवन, जे. बी. एम. संस्कृत महाविद्यालय को लेकर भारतीय विद्याभवन, जे. बी. एम. संस्कृत महाविद्यालय तथा अन्य संस्थाओं में गया । वहाँ के प्रधानाचार्यों तथा आचार्यों से आपश्री का विचार विनिमय हुआ । जिसके परिणाम स्वरूप अखिल भारतीय वैष्णव परिषद् के अन्तर्गत वृहन् मुम्बापुरी संस्कृत विद्वत सभा की स्थापना हुई जिसके अध्यक्ष पद पर पंडित श्री त्रीकमलाल शास्त्री और मंत्रीपद पर मेरी नियुक्ति हुई, प्रतिमाह इसकी सभी होती थी जिसमें बंबई के विद्वान एकत्र होते थे पूज्यपाद श्री प्रथमेशजी तव पधरावनी भेट नहीं लेते थे, इतना ही नहीं अपनी ओर से सहयोग प्रदान कर देते थे ।

अनुग्रह की वर्षा -- मेरी भागवत सप्ताह में आपश्री परिषद् के प्रचार हेतु पधारते थे आपश्री की आज्ञा थी कि श्री वल्लभ के सिद्धान्त सरल जनता के काम नहीं होती हैं। आपश्री ने अनेक बार मुझे श्रीमद्भागवत एवं षोडष ग्रंथ ज्ञान सत्रों के माध्यम से वाणी पवित्र करने का अवसर प्रदान किया था । आप सदैव आज्ञा करते थे कि इस मंत्र से सर्वोत्तम जी का सम्पुट पाठ निष्काम भाव से करो तो प्रभु आनन्द का अनुभव करायेंगे ।

परिषद् में जवाबदारी --- आपश्री ने मुझे पहले बंबई समिति में और बाद में केन्द्रीय समिति में लिया । बाद में १९७५ में इलस्ट्रेटेड वीकली तथा कतिपय अन्य पत्रिकाओं ने जब पुष्टिमार्ग के विषय में अनुचित लेख छापे तब उन पर न्यायालय में वाद करने के लिए जन-जागृति सभाओं का आयोजन किया गया और मुझे भी इस कार्य में जोड़ा गया उस समय मेरी कथाओं में बड़ी संख्या में सी.आई.डी. लगे रहते थे किन्तु आप श्री के आशीर्वाद से मेरा बाल बाँका नहीं हुआ ।

१९७७ में महाप्रभु श्री वल्लभाचार्यजी का पंचशताब्दी के समय श्री वल्लभ संदेश पाक्षिक का प्रकाशन हुआ तव मुझे इसके सम्पादक का दायित्व सौंपा गया था । १९८६ में मुझे परिषद का केन्द्रीय मंत्री भी बनाया गया तब जूनागढ़ केस के संबंध में प्रकाशित मेरे एक लेख प र भारी विवाद हुआ तो मैंने अविलम्ब त्यागपत्र सौंप दिया । इस समय प्रथमेशजी महाराज ने कहा -- "पंडितजी ! ये तो अपने संप्रदाय की बातें हैं, इन्हें लेकर त्यापगत्र देना उचित नहीं । थोड़ा समय निकलने दो सारा उफान शान्त हो जावेगा ।"

एक वार आपश्री ने कहा --- "पंडितजी आप नित्य हवन तो करते ही है अत : अग्नि होत्र ले लीजिए । मैंने कहा कृपानाथ अग्नि होत्र के वाद की जवावदारी तथा परिवार के निर्वाह का प्रश्न भी हैं । आपश्री ने कहा -- आप अपनी प्रवृत्ति चलने दो उसके साथ जडाहुति अग्निहोत्र का नियम ले लो किन्तु मैं परिस्थितिवश पूज्य आचार्यश्री की इस आज्ञा का पालन नहीं कर पाया ।

विनोदी स्वभाव --- मैं जव कभी मध्याह्न में आपश्री के पास पहुँचता और सायंकाल के वाद वहाँ होता तो आपश्री खवास को पत्तल का इशारा कर देते मैं कहता -- मुझे तो

अनेक बार आना पड़ेगा तब आपश्री मंद मंद मुस्कराते हुए कहते - आप के लिए इस घर में चौबीसों घंटे पत्तल तैयार रहेगी ।एक ओर तो आपश्री मुझे आज्ञा करते थे कि बजन घटाओ लेकिन दूसरी ओर अपने श्रीहस्त से पत्तल में प्रसाद पधराते और कहते कोई बात नहीं आरोगो । आपका वह स्वरूप स्मरण करके आज भी रोमांच हो आता है और आँसू आ जाते हैं । दोपहर को आपश्री चाय लाने की आज्ञा करते । मैं कहता कि कृपानाथ। मैं चाय नहीं पीता । तब आपश्री कहते आप कैसे पंडित है कि पुष्टिमार्ग में रहकर चाय नहीं पीते । गुजराती होकर चाय से कैसे बच निकले ÷ तव मैं कहता कि गुसाँईजी के समय से आज तक मेरे कुल में पुष्टि मार्ग की परम्परा है । मुझे याद है कि मेरे दादाजी और पिताजी ने भी कभी चाय, काफी नहीं पी । मेरा पुत्र भी नहीं पीता है । तब आपश्री सहज ही हँसने लगते ।

प्रयाग के कुंभ मेले के समय आपश्री ने कहा कि कथा का विभाग इस पद्धति से करो । दूसरे दिन प्रवचन के पश्चात् मैं नित्य कर्म में था तभी आपश्री का बुलावा आया अतः मैंने कहा अभी आता हूँ । तभी महाराजश्री अविलम्ब मेरे पास पधारे और मुझे नित्य कर्म करते देखकर बोले -- आप कर्तव्य निष्ठ हैं इसलिए इच्छा हो तव पधारें पत्तल तैयार हैं मुझे ऐसा लगा था कि आपको कथा विभाग की बात का बुरा लगा है किन्तु अव मेरा समाधान हो गया ।

पूज्य सरोजिनी वहुजी भाभी जी महाराज का भी स्वभाव ऐसा ही कृपायुक्त है । एक वार मैं कलकत्ता में श्री लक्ष्मी नारायण मंदिर में भागवत करने गया तब बहूजी ने मुझे अधिकारी जी को भेजकर बुलाया और कहा शास्त्रीजी आप चाहें जहाँ कथा करें लेकिन रहने की व्यवस्था यहीं रखें । मैंने स्थिति स्पष्ट की तब आपश्री ने आज्ञा की कि दोनों समय प्रसाद लेने यही आवें इसी प्रकार जब मैं बंबई के लिए रवाना होने लगा तो भाभीजी ने टोकरी मेरे साथ दी पूज्य बटूजी मेरी बा (माताजी) के समान चिन्ता रखती थी ।

पुष्टिमार्ग पर अंधकार छाया :-- आपश्री के लीला में पधारने के समाचार से मुझे गहरा आघात लगा। मैं जतीपुरा पहुँचा, मुझे लगा कि सम्प्रदाय के लिए छाते तानकर योद्धा के समान लड़ने वाले आचार्य का तिरोधान हो गया । गौरक्षा आन्दोलन के निर्भय और अडिग सत्याग्रही अव श्री प्रथमेश नहीं रहे, विश्वहिन्दू परिषद् के मार्गदर्शक चल दिए। वैष्णव परिषद् के विस्तार कर्ता कर्मठ और सच्चे सेवा कर्ता प्रथमेशजी हमारे बीच नहीं रहे । धर्म के साथ व्यवहार पक्ष का समन्वय करने वाले धर्म और विज्ञान का सामंजस्य करने वाले आचार्य श्री चले गये पूज्य प्रथमेशजी में अनेक गुण थे किन्तु आपका औदार्य तो अद्वितीय था आपके प्रस्थान से अंधेरा छा गया है, भविष्य में पूज्य लालमणिजी को परमात्मा सामर्थ्य प्रदान करे और वैष्णव परिषद् को नव प्रकाश मिले, यही प्रार्थना है ।

अति अद्भुत व्यक्तित्व

श्री बालकृष्णदास ना. शेठ, घाटकोपर

''बालक सब ब्रह्म जानके, वेद विमल जस गाय ।
मानिक चन्द प्रभु सर्वदा, श्री गोकुल करो विहार ।।''

''स्ववंशे स्थापिताशेषस्वमाहात्म्य'' --- श्री सर्वोत्तम स्तोत्र

उपर्युक्त पंक्तियों के आधार पर प्रातः स्मरणीय पू.पा.गो. श्री रणछोड़लाल जी महाराज श्री के व्यक्तित्व के विषय में श्री आचार्यचरण तथा श्री प्रभुचरण के नामों की संगति बराबर ही बैठती है । आपश्री को ६ सर्वलक्षण सम्वभः श्री कृष्ण ज्ञान दो गुरुः के रूप में स्मरण करना सर्वथा उचित है ।

जिस प्रकार महाभारत के युग में श्रीकृष्ण का व्यक्तित्व पूरी तरह छाया हुआ था इसी प्रकार वर्तमान युग में विगत लगभग ३५ वर्षों में पुष्टिमार्ग में आप श्री का व्यक्तित्व सर्वलक्षणस्वरूप वल्लभकुल के आचार्य के रूप में छाया रहा । आपश्री में सर्वकलाओं की निपुणता के साथ निरभिमानता का सुन्दर समन्वय था । आपश्री सभी कलाओं का विनियोग भगवद् सेवा में ही करते थे। आपश्री जब पदगान करते या वाद्य बजाते तो आपकी अद्वितीय संगीत कला का ज्ञान प्रकट होता था संगीत के सम्बन्ध मेंआपने जो लेख लिखे हैं उनसे स्पष्ट हो जाता है कि आप गीत संगीत सागर थे । आयुर्वेद, विधिशास्त्र, पाकशास्त्रज्ञ सेवा शृंगाँर प्रत्येक क्षेत्र में आपका असाधारण अधिकार और अनोखी मौलिकता थी । आपका अध्ययन गंभीर और दृष्टि तलस्पर्शिनी थी । स्मरण शक्ति भी अद्भुत थी। आचार्यों, शास्त्रियों, गुणीजनों, विद्वानों और कल्पकारों का आप सदैव आदर करते थे तथा उन्हें प्रोत्साहित करते रहते थे ।

सनातनधर्मी वेदमार्गीय अनेक पंडितों एवं आचार्यों के साथ आपके संबंध थे । उनके साथ आवश्यकतानुसार चर्चा भी होती थी । आप सहज ही पुष्टिमार्ग की श्रेष्ठता, उत्कृष्टता का ज्ञान अपने सम्पर्क में आने वाले विद्वानों तथा आचार्य को कर देते थे । आपके वचनामृतों में श्री सुबोधिनीजी,षोडशग्रंथ शिक्षापत्र आदि का सार होता था और शैली भावमयी तथा सरल - सुबोध होती थी । वचनामृतों में आपश्री का श्रीकृष्ण ज्ञान दो गुरु का स्वरूप प्रकट होता था ।

गौरक्षा के अभियान में आप सदा अग्रणी रहते थे । आपका विश्वास था कि वैष्णवों की संगठित शक्ति इस दिशा में अद्भुत कार्य कर सकती है साथ आचार्य बालकों का प्रेरणा भी मिलती रहनी चाहिये आपने परिषद् का कार्य संभाला । कार्यकर्ताओं को प्रेरणा दी ।

आपश्री का भगवद् आश्रम तो ऐसा सुदृढ़ था कि जहाँ-जहाँ आपश्री ने सोमयज्ञ किये या कुंभ पर्व के आयोजन किये वहाँ शून्य में से विराट की सृष्टि हुई । सभी का व्यापक सहयोग मिला क्योंकि ये आयोजन निःस्वार्थ थे और वैष्णव संगठन के प्रतीक रूप

में होते थे । आपश्री ने अपने जीवन के द्वारा निर्हेतुक भक्ति का व्यावहारिक स्वरूप और उसकी व्याख्या प्रस्तुत की थी ।

आपश्री का प्राकट्य श्री गोवर्धन-गिरिराज की तलहटी में जतिपुरा में हुआ था । आपका बचपन वहीं व्यतीत हुआ । बाद में भी जब जब भी समय मिलता तब आप श्री जतीपुरा में विराजते थे । लीला में पधारने के पाँच दिवस पूर्व जतीपुरा के झापरिया को आपश्री ने कहा था कि अब मैं ब्रज में ही रहने वाला हूँ । तू इस स्थान को साफ रखा कर । आप श्री के वचनों का रहस्य झापरिया समझ नहीं पाया । आपश्री का अन्तिम संस्कार भी गिरिराज की तलहटी में हुआ । आपश्री का स्थान तो सदा हरिदासवर्य श्री गिरिराज जी के समीप ही है । आप श्री के लिए "गोवर्धनोति उत्साह तल्लीलाप्रेमपूरितः" कहना सर्वथा उचित है ।

पुष्टिमार्गीय वैष्णव परिषद् तो आपश्री का प्राण थी । वैष्णवों में तो आपश्री के सम्मान सामर्थ्य नहीं है कि वे अपने बलवूते पर संगठन का महान् कार्य कर सकें अतः परिषद् के कार्यकर्ता आपश्री से प्रेरणा लेकर निःस्वार्थ भाव से धर्म की सेवा करेंगे तो आप श्री अवश्य सामर्थ्य प्रदान करेंगे । आपश्री तो "सान्निध्य मात्रदत्तः श्रीकृष्णप्रेमामत" की उक्ति को चरितार्थ करने वाले हैं । श्री यमुनाष्टक में महाप्रभु श्रीमद् वल्लभाचार्य आज्ञा करते हैं कि श्री महारानीजी के सान्निध्य से सेवा के लिए तनुनवत्व की प्राप्ति होती है । उसी प्रका र यहाँ भी समझना चाहिए । आपश्री सर्वस्व दान कुशल रूप से भक्तों के सभी मनोरथ पूर्ण करेंगे इसमें कोई सन्देह नहीं है ।

वल्लभीय अस्मिता के संरक्षक

पं. मदनलालजी जोशी शास्त्री, मन्दसौर

भारतीय दर्शन के तत्त्वदर्शी आचार्यों की परम्परा में जिस प्रकार शुद्धाद्वैत - ब्रह्मवाद के प्रतिपादक एवं पुष्टिमार्ग के प्रणेता महाप्रभु श्रीमद्वल्लभाचार्यचरण का विशिष्टतम एवं प्रमुख स्थान माना जाता है । उसी प्रकार अपने पितृपुरुष आचार्य वल्लभ के दिव्य सिद्धान्तों को युग के अनुरूप व्याख्यायित कर, अपनी रचनात्मक गतिविधियों एवं लोक ग्राह्य प्रवृत्तियों द्वारा लोक कल्याण का संदेश देने वाले गोस्वामी आचार्य महानुभावों में प्रथम गृहाधिपति पूज्यपाद गोस्वामी श्री रणछोड़ाचार्यजी महाराज प्रथमेश का भी वह उल्लेखनीय एवं अनुस्मरणीय स्थान है । जिस पर न केवल पुष्टि सम्प्रदायानुयायी वैष्णव समाज अपितु भारतीय संस्कृति के प्रति आस्थाशील प्रत्येक सनातन धर्मावलम्बी गौरवान्वित हो, गर्व का अनुभव किये बिना नहीं रहता ।

वस्तुतः आचार्योचित गरिमा के अनुरूप अपने प्रभावशील व्यक्तित्व एवं लोकप्रियता

की ऊँचाइयों को स्पर्श करने वाले, कलात्मक कृतित्त्व के फलस्वरूप जहाँ एक ओर अपने अपने वंशानुगत आचार्यत्व का सफलतापूर्वक निर्वाह करते हुए उसके मंगलमय महात्म्य एवं समुज्वल स्वरूप की छवि को और अधिक अभिवर्धित करने का कीर्तिमान स्थापित किया वहीं वल्लभीय सिद्धान्तों का पूर्ण संरक्षण करते हुए उनकी प्रासंगिकता एवं युगीन उपादेयता की ओर जनमानस को प्रेरित कर दिया निर्देशन का जो कल्याणकारी कार्य किया वह अपने आप में एक ऐसा उदाहरण है, जिसका अनुपालनकर प्रत्येक व्यक्ति अपने जीवन को सही दिशा की ओर ले जाते हुए संकल्पित लक्ष्य की प्राप्ति कर सकता है ।

वाक्पति वल्लभ के आनुवंशिक संस्कारों से सुसंस्कृता आपकी वैदुष्यमयी वाणी ने निश्चित ही प्रापञ्चिक इस संसार की नीरसता में सरसता का ऐसा संचार किया, जिससे प्रत्येक जिज्ञासु-"रसो वै सः" का आत्मावबोध कर "ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या" के स्थान पर "ब्रह्म सत्यं जगत् सत्यं" की सुखद अनुभूति कर सके । यही आपके आचार्यत्व एवं गुरुत्व का वह सार्थक स्वरूप है, जिसको महाप्रभुजी ने अपने सैद्धान्तिक ग्रंथों में आचार्य अथवा गुरु के लक्षण बताते हुए इस प्रकार परिभाषित किया है --

"श्री भागवततत्त्वज्ञं, दम्भादिरहितं परम् ।
कृष्णसेवापरं वीक्ष्य भजेज्जिज्ञासुरादरात् ।।"

पूज्यपाद श्री प्रथमेशजी निस्सन्देह इसके सार्थक स्वरूप थे, जिन्होंने स्नातक के रूप में पूर्णतया निस्पृह होकर शरणागत जीवों को प्रभु-सान्निध्य का पावन प्रसाद प्रदान किया।

इसके अतिरिक्त आप उन समस्त शास्त्रों के ज्ञाता एवं तत्त्वज्ञ थे, जिनके आधार पर जिज्ञासुओं की जिज्ञासा का समाधान कर उन्हें संतुष्ट किया जा सके । इसी प्रकार आप न केवल शास्त्रज्ञ अपितु शास्त्रोक्त संहिता के परिपालक एवं तदनुरूप आचरणशील ऐसे आचार्य थे, जिनके संबन्ध में कहा गया है कि --

आचिनोति हि शास्त्राणि, स्वयमाचरत्यपि ।
स्वयमाचरते यस्मात्, तस्मादाचार्य ईरितः ।।

वस्तुतः पूज्यपाद प्रथमेशजी ऐसे ही आचार्य थे जिन्होंने आचार्योचित आचारसंहिता का अक्षरशः परिपालन करते हुए अपने आचार्यत्व का यावज्जीवन संरक्षण किया ।

बहुआयामी व्यक्तित्व एवं सर्वतोमुखी प्रतिभा के धनी पूज्यपाद प्रथमेशजी का संपूर्ण जीवन दर्शन विविध प्रकार की कई ऐसी विशिष्टिताओं से परिपूर्ण रहा है जिन्हें अकल्पनीय ही कहा जा सकता है । सागर के समान गंभीर एवं सूर्य के समान तेजस्वी आपके जीवन दर्शन के उन अध्यायों को कभी भी भुलाया नहीं जा सकेगा, जिनमें आपके अदम्य साहस, अतुलित शौर्य एवं अपराजेय व्यक्तित्व के साथ प्रत्युत्पन्नमनश्विता तथा तलस्पर्शी वैदुष्य के प्रत्यक्ष दर्शन होते हैं । ऐसे एक नहीं अनेकों उदाहरण हैं आपके साधना शील तपोमय जीवन का परिचय मिलता है जिनका सांगोपाङ्ग समुल्लेख यद्यपि इस लघु कलेवर-लेख में

संभव प्रतीत नहीं होता तथापि आपके जीवन की गतिविधियों में दो प्रवृत्तियाँ तो ऐसी है जिनका समुल्लेख करना प्रासंगिक दृष्ट्या इसलिए भी अत्यावश्यक एवं उपोदय है कि इनके द्वारा हम कर्तव्य परायणता के आधार पर संगठन के सूत्र को सुदृढ़ बनाते हुए अपने जीवन में सांस्कृतिक तेजस्विता को आत्मसात् कर सकें । निस्सन्देह इन दोनों प्रवत्तियों को मूर्तरूप देने में जहाँ पारस्परिक सौहार्द्र, त्याग निष्काम भाव एवं परमसहिष्णुता के साथ औदार्य की आवश्यकता है, वहीं अपनी सनातन संस्कृति के प्रति पूर्ण आस्था एवं समर्पण होना भी अनिवार्य है । पूज्यपाद श्री प्रथमेशजी ने वल्लभीय अस्मिता के संरक्षण हेतु इनकी उपादेयता को ध्यान में रखते हुए अंतिम समय तक अपने जीवन के मूल्यवान क्षणों का जिस रूप में विनियोग किया क्या उसे कभी भुलाया जा सकेगा ? निश्चित ही आपका यह अविस्मरणीय एवं उल्लेखनीय विनियोग महाप्रभु श्री वल्लभार्यचरण द्वारा प्रवर्तित पुष्टिसम्प्रदाय के इतिहास का वह स्वर्णिम पृष्ठ है, जिसका अध्ययन मनन एवं तदनुरूप अनुपालनकर भावी पीढ़ियाँ प्रेरणा प्राप्त करती रहेगी ।

पूज्यपाद श्री प्रथमेशजी पुष्टि सम्प्रदाय के संगठन को सुदृढ़ता बनाने हेतु यावज्ञीवन परिषद् के प्रति अहर्निश चिन्तनशील रहे एवं सम्प्रदाय की इसी एक मातृसंस्था भारत के प्रत्येक प्रान्त में पदार्पण कर आपने परिषद् की शाखाओं की स्थापना की एवं उन्हीं के माध्यम से संगठन के इस सौहार्द्र भरे स्नेह-सूत्र में सबको पिरोते हुए प्रचार-प्रसार करते रहे। आपको सदैव संगठन को सुदृढ़ एवं शुद्ध बनाये रखने की चिन्ता रहती थी । आपके विचार आप भी उतने ही प्रासंगिक और मननीय हैं :--

"परिषद् के माध्यम से संगठन को सुदृढ़ एवं शुद्ध बनाये रखने के लिये मेरी दृष्टि से सबसे अधिक महत्वपूर्ण एवं आवश्यक कार्य है -- "सत्संग" सत्कार्य के लिए सद्भावना पूर्वक पारस्परिक मिलन का नाम ही सत्संग हैं । व्यावहारिकपाश में आबद्ध अपने व्यवहार को पृथक कर जितने समय तक भगवत्सेवा, गुरुसेवा एवं वैष्णवों की सेवा में हम संलग्न रहते हैं उतने समय का हमारा विधिवत् समझकर समर्पित भाव से उसके माध्यम से सेवाकार्य करते हैं तो निश्चित ही हम श्री हरिगुरु वैष्णव तीनों की सेवा करने का लाभ ले सकते हैं । अन्यथा, परिषद् में रहते हुए प्रपंचों में भी उलझा जा सकता है ।" (पू.पा. श्री प्रथमेशजी)

इसी प्रकार के स्पष्ट एवं शास्त्रानुमोदित तथ्यपूर्ण विचार विविध प्रसंगों पर व्यक्त करते हुए परिषद् के माध्यम से सम्प्रदाय के वास्तविक स्वरूप का दिग्दर्शन कराने के पवित्र उद्देश्य से आपने कई ऐसे समारोह आयोजित करवाये जिनकी उपयोगिता आज भी प्रत्यक्ष दिखाई दे रही है । व्रजयात्रा के समय श्री गोवर्धन गिरिराजजी की सन्निधि में परिषद् का अधिवेशन, साहित्य सम्मेलन, अष्टछाप कीर्तन, व्रजभाषा कवि सम्मेलन आदि कई ऐसे समारोहों का शुभारम्भ कर वस्तुतः आपने उस पवित्र परम्परा को मूर्तरूप देने का महत्वपूर्ण कार्य किया, जिसकी आज अत्यधिक आवश्यकता है । इसी प्रकार क्षेत्रीय सम्मेलनों के

समायोजन भी आपकी दूरदर्शिता पूर्ण सूझबूझ के परिचायक हैं ।

निस्संदेह व्यापकस्तर पर परिषद् को विकास की ओर निरन्तर अग्रसर करते रहने में प्र ामेशजी ने जो कार्य किया वह सदैव उनकी स्मृतियाँ दिलाता रहेगा । वे परिषद् के प्राण थे । परिषद् के माध्यम से पुष्टिमार्ग के साम्प्रदायिक संगठन को सुदृढ़ करने के साथ ही दूसरा महत्वपूर्ण कार्य जो पूज्यपाद श्री प्रथमेशजी ने किया । वह है सोमयज्ञ की संरचना के द्वारा पुष्टिसम्प्रदाय में यज्ञीय संस्कृति का पुनर्जागरण ।

सोमयज्ञ के अपने इस शुभ संकल्प को साकार करने के पूर्व आपने निश्चित रूप से यह विचार किया होगा कि वर्तमान युग से प्रभावित वातावरण से यदि समाज को एवं सम्प्रदाय को दूर रखना है तो महाप्रभुजी श्री वल्लभ के उस अशेष महात्म्य को प्रकट करना अनिवार्य है, जिसकी स्थापना पितृपुरुष के रूप में आचार्य वल्लभ ने अपने एवं वंशजों में की है और जिन्हें प्रभुचरण श्री विट्ठलनाथजी ने -- 'स्ववंशे स्थापितशेषस्वमाहात्म्यः' के नाम से श्री सर्वोत्तम स्तोत्र में उल्लिखित किया है ।

वस्तुतः प्रथमपीठाधीश्वर पूज्यपाद गो. श्री प्रथमेशजी का जीवन दर्शन स्वयं में एक दर्शन है, एक ग्रंथ है । जिसका निष्ठा पूर्वक अनुशीलन करने पर ही वास्तविकता का वोध यात्किंचित् संभव है ।

जीवन दर्शन एवं सामाजिक चेतना

प्रो. भगवन्तशरण जौहरी, उज्जैन

वल्लभ सम्प्रदाय व सनातन धर्म के मनीषियों में संभवतः कोई ऐसा व्यक्ति नहीं होगा जो प्रथमेशजी के नाम से अपरिचित हो । वे मानो पारस थे, जिसको भी उन्होंने अपनी अनुकम्पा के स्पर्श से आलोकित किया उसे स्वर्ण बना दिया । आपश्री वल्लभसम्प्रदाय की गादी के प्रथम गृहादिपति या पीठाधीस्वर थे । आपश्री वल्लभसम्प्रदाय की गादी के प्रथम गृहाधिपति या पीठाधीश्वर थे । आपश्री का मूल नाम श्रीवल्लभराय था बाद में श्री रणछोड़ाचार्य हुआ । आपने चिर काल से विलुप्त परम्परा का पुनर्निमाण कर सोमयज्ञ की शृंखला को स्थापित किया । वैदिक धर्म की प्रगति व पुष्टि संप्रदाय के नव-जागरण का सम्पूर्ण श्रेय एकमात्र आपके गौरव का स्मरण कराता है । प्राचीन व आधुनिक युवा पीढ़ी के वीच सेतु वन आपने पथ प्रदर्शक (Torch-Bearer) का महत् कार्य किया । दैवोद्धार प्रयलात्मा स्वरूप की ओर मोड़ कृष्णभक्ति का दान आपका मूलमंत्र रहा । जो कार्य कभी गुसाईंजी विट्ठलनाथ जी ने सम्पादित किया था, वही बीसवी सदी में आपने कर दिखाया । अकिंचन जीव को प्रभु के दर्शन व सामर्थ्यवान् को निष्कंचन भाव का संकेत आप ही के वर्चस्व का प्रतीक है । अन्तर्राष्ट्रीय पुष्टिमार्गीय वैष्णव परिषद की सैकड़ों शाखाओं का संचालन आपकी संगठन कुशलता का परिचायक है । मेरे निर्देशन में लन्दन

से श्री पीटर 'बालकृष्ण की धर्मसाधना' पर शोध करने आये थे । आपने उन्हें मथुरा, गोकुल, जतीपुरा की यात्रा कराकर प्रचुर सामग्री दी । अमेरीका में आपके सेवक श्री श्यामदास अंग्रेजी भाषा में मार्ग का मासिक पत्र प्रकाशित कर शाखा का संचालन कर रहे हैं । आपके बहुआयामी व्यक्तिगत का जितना मनन चिन्तन करें वह कम ही होगा ।

प्रथमेशजी का मत था कि वैष्णवों में सम्पन्न व्यक्ति तो हजारों हैं पर प्रचार कार्य में मिशनरी भाव से ऊपर उठने वाले विद्‍वान उंगलियों पर गिने जा सकते हैं । उनके मन में मेधावी शास्त्रियों वक्ता व लेखकों के लिए गहरा एवं ऊँचा स्थान था ।

प्रथमेशजी के तपोधनी व्यक्तित्व ने मार्ग को सतत् उर्ध्वगामी बनाया व प्रकाश की एक किरण प्रदान कर हम जैसे अंकिचनों को प्रकाश किरण देकर विद्‍वान वंक्ता घोषित किया ।

स्वामिनीजी के स्वरूप पर आपकी विशेष निष्ठा थी । एक प्रवचन में आपने उनके स्वरूप को 'श्याम स्नेह साधिका प्रकटी है राधिका ।' निरुपित किया । ठाकुरजी की प्रेरक शक्ति आप ही हैं । प्रकृति के सहयोग के बिना पुरुष कभी पूर्णत्व नहीं पा सकता । आप एक दुर्लभ पद उद्धृत करते थे ।--

महारस प्रकट्यो पूरन आनि ।
अति फूली घर घर ब्रजनारी, श्री राधा प्रकटी जानि ।।१।।
छाई मंगल साज सबै वै महामहोत्सव मान ।
आई घर बृषभान गोप के, श्रीफल सोहत पान ।।२।।
कीरति बदन सुधानिधि देख्यों सुन्दर रूप बरवान
नाचत गावत, देकर तारी, होत न हरष अधान ।।३।।
देन असीस सीस चरनन धरि, सदा रहो सुखदान ।
रसनिधि ब्रजरसिकरायसों कहो सकल सुखदान ।।४।।

आपश्री ने मुझे भी दो शोधपरक लेख श्री राधिका पर लिखने की प्रेरणा दी व उनका गुजराती अनुवाद करा कर उधर गुजरात की पत्रिकाओं में भी प्रकाशित कराया ।

सेवा के साथ आपने सत्संग के महत्व का निरन्तर प्रतिपादन किया । रामायण में स्वर्ण और मोक्ष के मुख की तुलना एक क्षण के सत्संग से की है । सूर का एक पद भी है --

"वैष्णव निज तन मेरे अंग" हमारे आचार्य ही सत्संग का पथ प्रशस्त करते हैं । एकान्त में सिद्धान्त का ज्ञान संभव है पर लोकबुद्धि से रसात्मक प्रभु का ज्ञान सत्संग पर ही निर्भर है । जैसे ब्राह्मण कर्मकाण्ड में शिखा रख तिलक लगाकर धूप, दीप, नैवेद्य से पूजा अनुष्ठान करते हैं, उसी प्रकार वैष्णव भी सत्संग में आते हैं । शिविर व यज्ञ भी इसी के प्रतीक हैं ।

इसी प्रकार आपने सदाचार व मनोनिग्रह का निरन्तर उपदेश दिया । आपश्री प्रवचन में आज्ञा करते थे कि हम दोहरी मानसिकता में जी रही हैं । पाठ व वार्ता साहित्य में सदा सदाचार का पाठ पढ़ते हैं व पत्रिकाएँ उपन्यास , रेडियो व दूरदर्शन हमें आधुनिकता या नग्न भौतिकवाद की ओर खींच रहे हैं । अतः मन का विषयों से निरोधकर मार्ग के सिद्धांतो को आचरण में ढालना ही एक मात्र ध्येय होना चाहिये । श्रेय और प्रेय का अन्तर समय पर पहिचानना व आचरण की निष्ठा ही जीवन व मरणधर्मा देह का लक्ष्य है। हमारी निष्ठा कितनी भी बलवान् हो स्वधर्म का बोध सत्संग पर ही निर्भर है ।

'धर्मो रक्षति रक्षितः ।' अर्थ, काम की सिद्धि भी धर्म पर निर्भर है । सहजभाव से हमने ब्रह्मसम्बन्ध की दीक्षा ली है । अतः हर पल जागरूक रह, सेवा व स्मरण से विमुख न हों ।'हरि-हरि छाडि के दूसरी न कीजे वात, एक एक घड़ी करोउन की जाते हैं।'

नित्यलीलास्थ प्रथमेशजी का व्यक्तित्व तपःपूत व प्रभावशाली नेतृत्वपूर्ण आभा से मंडित था । वह व्यक्तित्व बात हुई । हम जानते हैं कि अपना सत्संग महल बना लेना अलग बात है । पर समाज को एक इंच भी ऊँचा उठा देना, उससे कहीं अधिक गौरव पूर्ण कार्य है । पूज्य प्रथमेशजी की सामाजिक चेतना बहुत ही ऊर्जस्विनी रही । कलकत्ता में आपने पुष्टि श्री महिला समिति की स्थापना की । इस समिति ने १६८२ में षोड़श ग्रंथ की सरल सरस व सुवोध भाषा में टीका प्रकाशित की । युवा पीढ़ी को आप ने संदेश दिया कि अल्ट्रामाडर्न बनने में अन्ततोगत्वा नारी का पतन ही है । पाश्चात्य समाज की मानसिक विकृतियों के पीछे-यौन स्वेच्छाचरण ही है जिसकी विरासती फ्रायड ने दी है । जो दुर्दशा नारी ने नारी स्वातंत्र्य के नाम पर देखी वही धर्म की धर्मनिर्पेक्षता के नाम पर होगी जिसमें समग्र मानवता एक विशाल अंधकार में भटकती फिरेगी । हमारा दर्शन तो सतत-"तमसो मा ज्योतिर्गमय" का मंत्र फूंक रहा है ।

आपने मदन मोहनजी मंदिर उज्जैन में वल्लभ बाल मंदिर व नारी उद्योग केन्द्र श्री स्थापना की । आदिवासी वहुल क्षेत्र झावुआ (म.प्र.) में आदिवासियों की शिक्षा की शिक्षा के हेतु एक विद्यालय की स्थापना की जो परिषद् के आर्थिक सहयोग से निरन्तर प्रगति कर रहा है ।

भारतीय धर्म व संस्कृति का चिन्तन ही एकमात्र आप का निर्देशित अभीष्ट मार्ग है। जीव तो स्वभाव से ही दुष्ट है । अतः विषयाक्रांत देह का कल्याण श्रीकृष्ण की सेवा एवं स्मरण से ही संभव है । महाप्रभु वल्लभ ने अपने ग्रंथ 'विवेक धैर्यश्रिय' में इसका रचनात्मक व सकारात्मक समाधान प्रस्तुत किया है ।

पुष्टिमार्ग की सब से महत्वपूर्ण उपलब्धि यह है कि यहाँ सेवा ही साधन है तथा वही साध्य भी है । अर्जुन एक दिन कृष्ण का सखा था । सारथी वन उसे मोह व आसक्ति से दूर किया । अंत वह शिष्य हो जाता है । कहता है --

'शिष्यस्तेहं शार्ध मां त्वां प्रपन्नम् ।'

उसका मोह भंग हो जाता है । चेतना लौट आती है । वार-वार कहता 'करिष्ये वचनं तव' इसी प्रकार कोई भी वैष्णव मोक्ष या स्वर्ग का कामना नहीं करता । वह तो जन्म जन्म इसी व्रज में वास चाहता है । प्रथम दिन सेवा का व्रत होता है न अंतिम श्वास तक लीला के ही दर्शन चाहता है । गोलोकधाम या लीला प्रवेश ही उसका संकल्प है । यही मोक्ष है ।

पूज्य प्रथमेशजी आधुनिक परिप्रेक्ष्य की सदाचर्चा करते थे । वे युवा पीढ़ी को आज के देशकाल के अनुरूप उद्‌बोधन प्रदान करते थे । भौतिकवाद के तनाव से त्रस्त जीव प्रातः से संध्या तक धन व विषयों को पाने के हेतु हाथ-हाथ करता है । शांति व आनन्द का एकमात्र स्त्रोत प्रभु की सेवा या सत्संग का कभी विचार नहीं करता ।

प्रथमेशजी वार्ता-साहित्य व कीर्तन-सेवा का अद्वितीय ऐतिहासिक व गरिमामय सिद्ध करते थे । वार्तासाहित्य में अकिंचन वैष्णव की कथा भी है जो गरीबी में केवल चने के दाने ही भोग घर पाते थे तुम्हें ठाकुरजी के प्रत्यक्ष अनुभव होते थे । लक्ष्मी जिनके चरणों में लोटती है उन प्रभु को पाकर धन की चाह शेष ही कहाँ रह जाती है । वे प्रभु तो अनाथों के नाथ हैं ।

'नाथ तू अनाथ को अनाथ कौन मो सो ।'

कई बार महिलाएँ एवं कम शिक्षित जन पूछते हैं कि हंम नियम से सेवा, पाठ, दर्शन व कीर्तन करते हैं पर मन पूरी तरह केन्द्रित नहीं होता । प्रथमेशजी एक ही उत्तर देते थे --

'अभ्यासेन वैराग्येन' निरोधलक्षण ग्रंथ के अनुसार मन को पुन, धन से विरक्त कर निरोध करले व नाम व लीला चिन्तन का सतत अभ्यास करता ही रहे । कभी तो साधना सफल होगी । 'कबहूँ दीनदयाल के भनक पड़ेगी कान ।' गोपीजन अबला थीं, निरक्षर थीं पर - 'ताहि अहीर की छोहरिया छछिया भर छाछ पे नाच नचावे '।

उनके समक्ष उद्‌धव का सम्पूर्ण ज्ञान शून्यवत हो गया था ।

पू. प्रथमेशजी वहुपार्श्वी व्यक्तित्व के धनी थे । प्रखर वक्ता असीम पर्यटक, प्रभावी नेता तथा गुणग्राहकता के पुंज थे । कीर्तन में आप स्वयं पखावज बजाते थे । एक बार वडौदा से वंवई कार में मुझे ले गए पर ड्राइव वे स्वयं कर रहे थे । पत्र भी वे स्यवं टाईप करके भेजते थे । ऐसे अद्वितीय प्रेरक आचार्यचरण की पुण्य स्मृति में सेवक के शतशः नमन व दंडवत् ।

वैष्णवता के युग प्रतीक

श्री गोकुलेन्द्र शर्मा (बंबई)

गोस्वामी प्रथमेशजी का स्मरण आते ही एक ऐसी विभूति, एक ऐसा व्यक्तित्व आँखों के आगे झूलने लगता है कि मन में अनायास ही श्रद्धा उमड़ने लगती है । आप अपना सर्वस्वत्याग कर भी स्वधर्म के प्रचार और रक्षा में आजीवन लगे रहे ।

उनके परिवार और हमारी पिछली तीन पीढ़ियों के संवंध रहे हैं । मेरे दादाजी पोतुकुर्चि श्री उपेन्द्र शास्त्रीजी कोटा में मंदिर की व्यवस्था में थे तथा पूज्य दादाजी के बड़े भाई श्री बालकृष्ण शास्त्री कोटा में संस्कृत पाठशाला का संचालन करते थे जिनके पास में श्री प्रथमेशजी पढ़ते थे । मेरे पास एक पुराना फोटो है जिसमें श्री बालशास्त्रीजी कोटा में अपनी शिष्य मंडली के साथ बैठे हैं जिसमें एक कोने में छोटे से मेरे पिता श्री पुरुषोत्तमजी भी बैठे हुए हैं अर्थात् श्री प्रथमेशजी व मेरे पिताश्री सहपाठी रह चुके हैं ।

प्रथमेशजी सर्वगुण सम्पन्न थे । शास्त्रों के संगीत के वह हर विषय के गहरे ज्ञान के अलावा शास्त्रार्थ करते करते सामने वाले को अचानक धोवी पछाड़ लगाने का पैंतरा उनका कुछ अनूठा ही था कि सामने वाला चारों खाने चित्त हो जाये ।

किसी कार्यक्रम में उनकी ड्रामेट्रिक एन्ट्री, अचानक उठकर चले जाने उनकी चाल ढाल तौर तरीके कुछ अनूठे ही थे । वे जहाँ भी जाते दर्शकों एवं श्रोताओं पर अपनी गहरी छाप छोड़ जाते थे । वे हर विषय व कारण तथा चीज को समझते थे । लोग भी उनका लोहा मानते थे ।

मैं भी उनके शास्त्रों के ज्ञान से और विशेषकर संगीत के ज्ञान से विशेषरूप से प्रभावित था तथा उनके प्रति आरंभ से ही मेरे हृदय में पूर्ण श्रद्धा थी ।

मैं पुष्टि सम्प्रदाय के एक स्थायी म्यूजियम की स्थापना की रूपरेखा तैयार कर रहा था जो मेरे पिताजी ने सुझाव के रूप में तिलकायतजी और प्रथमेशजी के समक्ष प्रस्तुत की थी उसी सम्वन्ध में मेरे पिताजी के माध्यम से मैं श्री प्रथमेशजी के साथ सीधे संपर्क में आया ।

कई वातों में उनके और मेरे विचारों में साम्य था । कई कार्य भी ऐसे थे जो मैं अपने जीवन में करना चाहता था जिन्हें वे भी अपने जीवन में करवाना चाहते थे परन्तु कार्य पद्धत्ति, समय और स्थान के विषय में हमेशा विरोधाभास रहा । इसी वजह से वे कार्यान्वित नहीं हो पाये, तथा स्वभाव भी दोनों का जिन्दगी था दोनों ही अपने अनुसार काम चाहते थे । उनका हमेशा यही आग्रह था कि सव काम छोड़कर सिर्फ यही कार्य कीजिये यही शव्द हमेशा विरोधाभास पैदा करता । उनकाआग्रह रहता था कि मैं जतीपुरा जाकर रहूँ और साम्प्रदायिक म्यूजियम के साथ वे ये भी चाहते थे कि जिन कई शास्त्रियों,

वैष्णव कार्यकर्ताओं ने सम्प्रदाय के प्रचार-प्रसार में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है उनकी संक्षिप्त जीवनी व संगमरमर की आवक्ष मूर्तियाँ बनाकर लगवाई जाय । किन्तु स्कीमे ही बनी रही कोई कांक्रीट शेप नहीं ले पायीं क्योंकि विचारधाराओं और कार्य शैली का विरोधाभास तो था तथा महाराजश्री का भी बंबई से बाहर आना जाना रहा इससे अनेक वर्षों तक संपर्क नहीं रहा ।

वल्लभाचार्य पंचशती की तैयारियाँ जोर-शोर से सारे भारतवर्ष में चल रही थीं । जब कमेटियाँ बनायी जा रही थीं, तब कुछ व्यक्तियों के द्वारा मेरे नाम का सुझाव भी आया किन्तु प्रथमेशजी ने कहा 'व्यक्ति का नाम सुझाव योग्य है किन्तु वह व्यक्ति स्वतंत्र दिमाग का है अपने हिसाब से काम नहीं कर सकता इसलिये अपने काम का नहीं ।' मुझे आकर पूछा कि महाराजश्री ने आपके नाम के सुझाव पर ऐसा क्यों कहा ? मैंने कहा - 'महाराजश्री ने ठीक ही कहा क्योंकि वे मुझे व मेरे कार्य तथा स्वभाव से अच्छी तरह से परिचित हैं।'

मेरे पिताजी के देहावसान के बाद मैं कुछ विक्षिप्त सा हो गया । वंबई से वाहर रहा अतः कामधन्धा व स्वास्थ्य अव्यवस्थित हो गया । दाढ़ी भी बढ़ गयी थी पिताजी की स्मृति में कुछ कार्य करने की योजना थी कि एक दिन अचानक प्रथमेशजी की आज्ञा से लिखा पत्र प्राप्त हुआ जिसमें कलकत्ते से बंबई पधारने तथा बंबई में रहने की अवधि की सूचना थी तथा उन्हें कुछ फिल्मों की एडिटिंग वगैरह का व अन्य काम है - आप आकर शीघ्र मिल लेवें । मैं मिलने गया तो उन्होंने मुझे पंचशती की ब्रजभाषा की व अन्य फिल्में एडीटिगं करने को दी । परिषद् के अन्तर्राष्ट्रीयस्वरूप व सोमयज्ञ एवं परिषद् के ७५ वर्षो के कार्यक्रम के लिए अनेक जिम्मेदारियाँ सौंपी जिसे मैंने पूर्णतः निभाने की कोशिश की ।

प्रयाग कुंभ पर्व पर भी काफी कार्य किया तो वे पोतुकूर्चि बालशास्त्रीजि श्री कंठमणि शास्त्रीजि देवर्षि रमानाथ शास्त्री श्री ब्रजनाथ शास्त्री आदि से मेरा पारिवारिक संबंध था अतः इस सभी के ग्रंथों के पुनः प्रकाशन हेतु साहित्य सामग्री माँगी । वे इन सभी शास्त्रियों के साहित्य का विभिन्न भाषाओं का अनुवाद करके प्रकाशन करने की योजना बनाने लगे ।

गोस्वामी वालकों के आग्रह पर महाप्रभु श्री वल्लभाचार्य जी पर फीचर फिल्म बनाने की जिम्मेदारी पर आचार्यश्री से पत्र व्यवहार व सलाह मशविरा हुआ तथा जो रूप में उस फिलम को देना चाह रहा हूँ उससे वे प्रभावित हुए । तथा अन्य कार्यकर्ताओं के द्वारा मना करने व प्रश्न उठाने पर भी उन्होंने मुझ पर सही कार्य का विश्वास व्यक्त किया क्योंकि वे जानते थे कि नामचीन बड़ा प्रोड्यूसर डायरेक्टर सिर्फ नाम का ही बड़ा होता है । वह विषय के साथ न्याय नहीं कर सकता । जब इस वात की जानकारी मुझे मिली तो मुझे अपने आप सम्वन्ध में प्रथमेशजी के विचार जानकर गर्व महसूस हुआ ।

प्रथमेशजी के पास अनेक योजनाएँ थीं जिन्हें वे कार्यान्वित करना चाहते थे और

उन्हें सही व्यक्ति की तलाश रहती थी तथा काम के समय उन्हें अपने खुद के स्वास्थ्य की सुख दुख की भी परवाह नहीं रहती थी । वे हर कार्य को पूर्णतः क्रियान्वित करना चाहते थे व उसे सतत होते रहना देखना चाहते थे । उनके फालोअप सिमाइन्डर निरंतर चालू रहते थे यही कारण था कि वे इतने बड़े-वड़े यज्ञों को कार्यों को पूरा करने में निरंतर प्रेरणा स्त्रोत वने रहे तथा लोगों को जागरूक करते रहे ।

अब हमें आवश्यकता है - एक प्रथमेश की चाहे वह इन यज्ञों के प्रभाव से प्रकट हो, चाहे हमसे से किसी में उनकी आत्मा का प्रवेश होकर हमें माध्यम वनाकर उनकी प्रेरणा हमसे वे काम करवाये,जिन्हें वे पूरा होते देखना चाहते थे । चाहे उनके कार्यों को पूरा करने के लिए हमें कहीं से भी एक योग्य प्रथमेश ढूंढकर लाना पड़े तैयार करना पड़े जो अपनी अनुशासन की लाठी हाथ में लिये हम मवेशियों को सही दिशा में हाँक सके ।

कहीं हम दिशाभ्रष्ट न हो जायें, अपना मार्ग न भूल जाये । हे प्रथमेशजी ! इस युग में जो प्रेरणा की ज्योति आपने हममे जगाई है - जो त्याग और स्वधर्म की रक्षा का पाठ आपने हमको पढ़ाया है - हम कहीं उसे भूल न जायें । कृपा करके हमें आपके सही प्रतिनिधि का चुनाव करने की दिव्य दृष्टि प्रदान करें ताकि हम एक नये 'प्रथमेश' को आपके प्रतिनिधि के रूप में तथा अपने युगनेता के रूप में स्वीकार कर सकें ।

कर्मयोगी

श्री हरिनारायण नीमा, उज्जैन

गिरिराज गोवर्धन की तरहटी जतीपुरा में जन्म लेकर शताब्दियों वाद श्रीमद् आचार्यचरण की भाँति भारत में शुद्धाद्वैत पुष्टिभक्तिमार्ग की यशःपताका फहराकर अनेकानेक जनहितकारी कार्यक्रमों के माध्यम से विखरे हुए सात करोड़ वैष्णवों को एकता के सूत्र में पूज्य प्रथमेश ने बांधने का महत्तकार्य किया है । संत कवीर की भाँति विना लाग लपेट के खरी-खरी बातें महाराजश्री ने समाज के सम्मुख रखी । अपने पुलवत अनुयायियों को सेवाधर्म का सदुपयोग देकर सन्मार्ग की और अग्रसित किया ।

श्री मथुराधीश प्रभु की सेवा स्वयं करके शृंगार सामग्री कीर्तन, फूलमंडली, सांझी आरती, मोहरा-होरी फाग, हिंडोरा, पलना, नित्य उत्सव, वर्षोत्सव की भावपूर्ण झांकी आपश्री ने वैष्णव जगत् को कराई । धर्म में राजनीति के हस्तक्षेप को अस्वीकार कर प्रथमेश ने करोड़ों की सम्पत्ति को त्यागकर अपने सेव्य प्रभु कोटा से जतीपुरा पधराए । जतीपुरा गिरधर निवास में प्रभु के विविध मनोरथ हुए । वर्षों तक प्रभु सुखपूर्वक जतीपुरा विराजे। अनुकूल वातावरण निर्मितहोने पर पुनः व्रज के राजा मथुराधीश कोटा पधारे । जतीपुरा से कोटा पधारने का दृश्य जिन्होंने देखा है, कभी नहीं भूल सकेंगे । ऐसा सुना है हर ब्रजवासी, वैष्णव, दर्शनार्थी, यात्री, सेवक वर्ग और स्वयं वल्लभलालजी महाराज (प्रथमेश)

की आंखों में विदाई के आंसू थे ।

कोटा पदार्पण पर भी वहाँ के आबाल, वृद्ध, वनिता, हिन्दू, मुसलमान, सिख, ईसाई, जैन सभी अपनी खोई हुई निधि मिल जाने की खुशी के आँसू बहा रहे थे । कोटा में श्री मथुराधीश के मनोरथों में विगत वर्ष में हुए ''छप्पन भोग'' का महत्व मनोरथ सम्प्रदाय के इतिहास में स्वर्णाक्षरों में अंकित हुआ है ।

''सोमयज्ञ'' की पुनरावृत्ति प्रथमेश ने ही शताब्दियों बाद संप्रदाय में की है । वैदिक संस्कार केन्द्र एवं मंदिरों की स्थापना कर आचार्य पुंगव ने भारतीय संस्कृति के मर्म को उजागर किया है । संत सम्मेलन आयोजित कर प्रथमेश जी ने कामानुज , माध्व, निंबार्क, शंकर सभी को बहुमान दिया ।

महाराजश्री के अपूर्व त्याग ,परिश्रम व अंतर्मन से उनसे गये कदम के परिणाम स्वरूप परिषद् ने अंतर्राष्ट्रीय स्तर प्राप्त किया । देश में विभिन्न स्थानों पर बाल मंदिर, वनिता विकास वीथी , शांति-शिविर, पी. पी. एस. और श्रीमद्वल्लभाचार्य जन-कल्याण प्रन्यास एवं परिषद शाखाओं की स्थापना आपश्री ने की । विश्व हिन्दू परिषद के आयोजन हों या गोवध बंद करने के लिए आंदोलन हों, पूज्य महाराजश्री पहली पंक्ति में अगुवाई करते थे । तूफान से सामना करने में वे माहिर थे ।

स्वधर्म जागरण अभियान के तहत कुंभपर्वों पर श्री वल्लभाचार्य नगर क़ी स्थापना और उसके अंतर्गत शानदार कार्यक्रमों का संपन्न होना बेमिसाल है । दरअसल प्रथमेशजी व्यक्ति नहीं , अपने एक सफल टीम और संस्था थे । दंभ और अभिमान से परे, सरल, तरल मनस्वी , साधुमना रणछोड़ाचार्यजी महाराज ''हरफनमौला ''थे ।

संस्कृत,अंग्रेजी , उर्दू, फारसी ,बंगला,मराठी ,गुजराती और हाडौती आदि भाषाओं के पंडित ,कानून,राजनीति, गांधी और मार्क्स के अध्येता, एलोपेथी ,होम्योपेथी ,आयुर्वेद के ज्ञाता। सारंगी, तानपुरा ,हारमोनियम ,पखावज ,बीन, बांसुरी ,बायलिन ,ढफ,शहनाई आदि के कुशल वादक, चित्रकार -रंगकर्मी-पुष्प प्रेमी, कवि, गुरू, मित्र, विद्वज्जनों के आश्रयदाता प्रथमेशजी थे ।

आपश्री कमाल की आत्मीयता वे रखते थे । एक बार जो उनसे मिल गया, सदा-सदा के लिए वह उनका हो जाता था । ' प्रथमेश सदियों में प्रकट होते हैं ' यद्यपि भौतिक रूप से वे हमारे बीच नहीं हैं , किन्तु उनका आदर्श जीवन एवं उनकी अनुकरणीय प्रवृतियाँ उन्हें अमर रखेंगी । श्री वल्लभाचार्य प्रथम पीठ के महान आचार्य के रूप में भी सदैव स्मरणीय रहेंगे ।

हम सबके 'वल्लभ ' प्रथमेशजी पर यह भगवदीय वाणी अक्षरशः लागू होती है :--

'' जो पैं श्री वल्लभ प्रकट न होते,

वसुधा रहती सूनी । ''

कला-प्रोत्साहक और कला मर्मज्ञ

-श्री बच्चूजी, ध्रुपद गायक, मथुरा

वल्लभ संप्रदाय ने भारतीय संगीत के संरक्षण और संवर्धन में असाधारण सहयोग प्रदान किया है । इस संप्रदाय के आचार्य श्रीमद्वल्लभाचार्य महाप्रभुजी ने अपने युग के श्रेष्ठ गायक और संगीतकारों को दीक्षित किया । उनकी संगीत कला और काव्य कला का भगवत् सेवामें विनियोग करवाया। सूरदास, परमानंददास, कुम्भनदास और कृष्णदास आपके साहित्य -संगीत -कला पारंगत सेवक थे । आपकी इस कला -प्रोत्साहन की परंपरा को आपके सुपुत्र श्री गुसाईजी विठ्ठलनाथजी ने समृद्ध किया । आपने अपने पिताश्री के ऊपर उल्लिखित चार महान् गायकों और अपने चार साहित्य - संगीत -कला प्रवीण सेवकों श्री गोविन्दस्वामी, छीतस्वामी ,चतुर्भुजदास और नंददास को सम्मिलित कर 'अष्टछाप ' की स्थापना की । अष्टछाप के कवि-गायकों को श्री जी की अष्टयाम सेवा में ऋतु पर्व एवं समयानुसार पदरचना और पदगान का दायित्व सौंपा गया । भगवत्सेवा में वाद्ययंत्रों का प्रयोग भी होने लगा । कुछ वाद्ययंत्र विशेष समय पर बजाये जाते हैं जैसे मंदिर में प्रातः नौवत बजती है और प्रभु को जगाने के समय वीणा-सितार -वादन होता है ।

वल्लभ संप्रदाय के परवर्ती आचार्यो में संगीत कला के मर्मज्ञ और प्रोत्साहक अनेक आचार्य हुए है : इसी परम्परा में पूज्यपाद गोस्वामी रणछोड़ाचार्यजी प्रथमेश हुए । आप स्वयं बहुत अच्छे गायक और प्रवीण वादक थे । लय-ताल के तो आप विशेषज्ञ थे । कलाकारों को प्रोत्साहन देने में भी आप अग्रणी थे । आप प्रायः कहा करते थे कि श्री व्यासजी के मतानुसार कलियुग में मानव जीवन का कल्याण और भगवत्कृपा की प्राप्ति कीर्तन से ही संभव है - ' कलो तद्हरि कीर्तन नात् '

श्री प्रथमेश जी ध्रुपद -धमार शैली में पदगान में विशेष दक्षता रखते थे । आप प्रातः से संध्या तक अष्टयाम सेवा में लीला के अनुरूप पदगान में विशेष रूचि रखते थे । ऋृतु और सेवा के समय के अनुसार रागरागिनी का प्रयोग पुष्टिमार्गीय सेवा में होता आया है । पूज्य प्रथमेशजी ने इस परम्परा को न केवल सुरक्षित रखा अपितु स्वयं पदगान द्वारा और कलाकारों को सम्मानित तथा प्रोत्साहित कर इसका सवर्धन भी किया ।

प्रथमेशजी महाराज कहा करते थे कि संगीत दैवी उपासना है । इसके संवंध में जो प्रशस्ति मिलती है उस पर संदेह करना अनुचित है । रागों का संवंध पंच तत्वों से स्थापित करते हुए आपने वताया कि भैरव राग का संवंध आकाश तत्व से, हिंडोल राग का संबंध वायु तत्त्व से, दीपक राग का संवंध अग्नि तत्त्व से, मेघराग का संवंध जल तत्त्व से और श्री राग का संवंध पृथ्वी तत्त्व से है ।

पुष्टिमार्गीय कीर्तन प्रणाली में संगति की दृष्टि से मृदंग-वादन का बहुत महत्व है । प्रथमेश जी मृदंग वादन की शैली की असाधारण जानकारी थी । वन्दिशे और बोलों के

तो आप जीवन्त कोश ही थे तबला वादन में भी आप की विलक्षण गति थी । नकारा वादन में आपकी प्रवीणता से सभी आश्चर्य चकित रह जाते थे । आपका सितार वादन भी उत्तम था । आपकी बहुमुखी प्रतिभा को देखकर यह प्रतीत होता था कि मानो जन्म से ही विविध वाद्यों की वादन कला पर आपका अधिकार है ।

आठ जनवरी १९८३ को भाईदास सभागृह विले पार्ले बम्बई में गुसांईजीश्री विट्ठलनाथजी के प्राकट्योत्सव पर विराट् संगीत सम्मेलन किया गया । इसमें इन्दौर के पंवार बन्धु जैन कीर्तन कार और मथुरा से मुझे आमंत्रित किया गया। जब मैं आपकी सेवा में उपस्थित हुआ तो आप श्री ने आज्ञा की कि आज हमारे आचार्य चरणों का प्राकट्य बाढ़ संगीत सम्बन्धी तुम हमारे यहाँ ही प्रसाद लेना । इसके बाद संगीत सम्बन्धी विस्तृत चर्चा होती रही प्रसाद का समय होने पर आपश्री ने सामने बैठा कर प्रसाद लिवाया । मैं पूरे समय धन्यता का अनुभव करता रहा ।

इसी समय मैंने आप श्री से प्रार्थना की कि संगीत समारोह में आप भी पधारें । आप जैसे कलापारखी और पूज्य की उपस्थिति में गाने से मुझे विशेष प्रसन्नता होगी । आपश्री ने पधारने की स्वीकृति प्रदान की । आपश्री समारोह में पधारे । मुझे बहुत हर्ष और गौरव का अनुभव हुआ । आपश्री ने अत्यन्त कृपापूर्वक मुझे स्टेज से बुलाकर आशीर्वाद प्रदान किया । मुझे यह प्रतीत हुआ कि मेरी साधना धन्य हो गयी । आपश्री ने कहा - 'तुमने बहुत अच्छा गाया ।' मैंने कहा - 'यह तो आपश्री का प्रसाद है ।'

जब वैष्णवों ने इस तुच्छ सेवक पर महाराज श्री की असीम कृपा देखी तो वे मुझसे आग्रह करने लगे कि आप महाराज श्री से प्रार्थना कीजिए कि वे अपने मुखारबिन्द से गायन सेवा देने की कृपा करें । मैंने कहा कि आप लोगों मेरे साथ चलें तो मैं प्रार्थना करूँगा । मैं वैष्णवों के साथ आपश्री के पास पहुँचा और गायन सेवा की प्रार्थना की । आपश्री ने कहा - 'भाई ! मैं किसी स्टेज पर नहीं गाता । इस पर हम सभी ने प्रार्थना की - 'महाराज ! यह तो आपके पूर्वजों की पावन स्मृति का गौरव प्रसंग है ।' तब आपश्री ने कृपापूर्वक मौन स्वीकृति दी । उस दिन आपश्री का गान सुनकर सम्पूर्ण उपस्थित वैष्णव आनन्द मग्न हो गये ।

पूज्यपाद प्रथमेशजी महाराज श्री ने अपने पूर्वजों की संगीत कला की उत्कृष्ट साधना की । उसका भगवत्सेवा में विनियोग किया और अनेक कलाकारों को प्रेरणा और प्रोत्साहन देकर उनकी प्रतिभा और साधना का भगत्वसेवा में विनियोग कराया । ऐसे कलामर्मज्ञ, कलाकारों के संरक्षक महान् आचार्य को कोटिशः वन्दन ।

आपश्री का प्राकट्य व्रज में हुआ । व्रज से आपका आत्मीय लगाव था । आपकी इच्छा अपने उत्तर काल में ब्रज में ही रहने की थी । ब्रज में ही आपके पार्थिव शरीर को अग्नि में समर्पित किया गया । आप नित्य लीला में स्थित होकर ब्रज में ही विराज रहे हैं। मुझ ब्रजवासी की यह शब्दमयी श्रद्धांजली आपश्री को सादर समर्पित है ।

गिरिजनों के उद्धारक

संत सीतारामदासजी वैरागी, झाबुआ

मैं एक साधु हूँ । देश में दूर-दूर तक घूमा हूँ । प्रायः अनेक सम्प्रदायों के आचार्यों और साधुओं के सम्पर्क में आया हूँ । सभी से मिलने के वाद मेरा यह विचार वन गया था कि वर्तमान युग के आचार्य पुराणपन्थी है । उनमें कोई ऐसा नहीं है, जो समाज को जगा सके और उनमें क्रान्ति के बीज डाल सके । सन् ६१७५ में संभवतः अप्रेल मास में एक लिंग (उदयपुर) में विश्व हिन्दू परिषद् का अखिल भारतीय कार्यकर्ता सम्मेलन का आयोजन हुआ । उस समय वहाँ पूज्य पाद आचार्यश्री प्रथमेशजी का अध्ययन और चिन्तन पूर्ण लेकिन ओजस्वी प्रवचन हुआ । वह प्रवचन क्या था मानो इस बात का उद्‌बोध ही था कि देश में अभी भी क्रान्तिकारी धर्माचार्य हैं । वे धार्मिक क्षेत्र में नेतृत्व कर सकते हैं और युग की धारा की दिशा बदल सकते हैं । मुझमें एक नयी शक्ति का संचार हुआ । लेकिन यह यह दूरी की स्थिति ही रही । निकट संपर्क का सुअवसर नहीं मिला ।

इसके बाद १६८१ ई. में रतलाम में आपके सान्निध्य का अवसर प्राप्त हुआ । आपने कहा कि मैं नवम्बर में झाबुआ आ रहा हूँ । नवम्बर में झाबुआ में मिलने पर आपने पूछा - 'स्वास्थ्य कैसा है बाबा ।' वास्तव में मैं उन दिनों अस्वस्थ ही था । घुटनों के दर्द के कारण उठना-बैठना मुश्किल हो रहा था । सर्दी, खासी और बुखार का प्रकोप भी चल रहा था । आपने मुझे तत्काल दवा दी और च्यवनप्राश भी दिया । साथ ही हिदायत भी दी कि बीमारी का दुर्लक्ष्य मत करो । इस घटना से मुझे यह प्रमाण मिल गया कि एकदम नये और सामान्य तथा अकिंचन कार्यकर्ता का भी आप कितना ध्यान रखते थे ।

आपका यह झाबुआ प्रवास दो दिन का रहा । इस समय आपने आदिवासियों की स्थिति का प्रत्यक्ष अध्ययन किया । उनकी गरीवी, बीमारी, अशिया आदि समस्याओं को निकट से देखा । धर्मान्तिरण की स्थिति भी प्रत्यक्ष देखी । अतः आपने झाबुआ जिला धर्मप्रचार, साक्षरता और मानव सेवा के लिए गोद ले लिया । इस कार्य को सम्पन्न करने के लिए आपने ग्रामीण एवं अरण्यसेवा संस्थान की स्थापना की । इस प्रकार इस आदिवासी क्षेंत्र के पुनरुत्थान का कार्य अपने हाथ में लिया । आपने मुझे इस कार्य को करने के लिए दायित्व सौंपा । आपश्री की प्रेरणा और आशीर्वाद से आज तक यह कार्य में सम्पन्न कर रहा हूँ ।

झाबुआ के प्रकल्प के कार्य से मुझे वारम्वार कलकत्ता और वम्वई जाना पड़ता था। आपश्री का आदेश था कि पत्रोत्तर मिले चाहे न मिले आप हर माह दो पत्र लिखकर झाबुआ प्रकल्प की जानकारी नियमित रूप से भेजते रहें । आरंभ में किराये के मकान लेकर कार्यारंभ किया गया । भूमि क्रय करने के लिए आपश्री की आज्ञानुसार पुष्टिश्री महिला समिति कलकत्ता की अध्यक्षा ने, जो कि ग्रामीण अरण्य एवं सेवा संस्थान की भी

अध्यक्ष थी, आर्थिक व्यवस्था की । पुष्टि श्री कलकत्ता के माध्यम से झाबुआ प्रकल्प के लिए समय समय पर बहुत सहयोग मिला ।

एक बार आपने कहा - 'बाबा ! आपके कार्य में ब्रह्म संबंध नहीं है ।' उस समय आपके कथन का रहस्य समझ में नहीं आया । लेकिन कुछ दिनों बाद जब आपसे मैं पुनः मिला तो मैंने कहा - 'हाँ, महाराज श्री ! संभावना इस बात की ही अधिक है कि कार्य में अहं हैं ।' तब आपने आज्ञा की - 'बाबा ! आप श्रीमद्भागवत पढ़ें ।' मैंने इस पर विशेष ध्यान नहीं दिया । दूसरी बार मिलने पर आपने पुनः भागवत का अध्ययन करने की आज्ञा की तब मैंने कोई ध्यान नहीं दिया । तीसरी बार कलकत्ता में सोमयज्ञ के अवसर पर आपने फिर आज्ञा की -'बाबा ! आप भागवत पढ़ें ।' मैं आश्चर्य चकित हो गया । सोचने लगा कि आचार्य श्री बारम्बार आज्ञा कर रहे हैं अतः इसमें अवश्य ही कोई रहस्य है । मैं पेढ़ी के एक कार्यकर्ता श्री मनुभाई को लेकर कलकत्ता के गोविन्द भवन में जाकर श्रीमद्भागवत लाया । पूज्य महाराज श्री ने ही अपने कर कमलों से वह ग्रंथ मुझे दिया।

कुछ समय बाद बंबई मे महाराज श्री के दर्शन हुए जब मैंने निवेदन किया - 'महाराजश्री ! आपने श्रीमद्भागवत दी है लेकिन इसके अध्ययन के बाद तो जागतिक कार्यों से मन का उच्चारण होने लगा है । आपने ही मुझे कार्य भी सौंपा हैं । मैं बहुत असमंजस की स्थिति में हूँ । आपने आज्ञा की - 'बाबा ! यह दृष्टिकोण वैराग्य का है । आप तीन बार श्रीमद्भागवत पढ़ जाइए । फिर देखिए यह केवल ग्रंथ नहीं है । यह साक्षात् ब्रह्म हैं ।' आज श्रीमद्भागवत के अध्ययन के कारण जो अलौकिक रस मिल रहा है, उसका वर्णन शब्दों में नहीं हो सकता । महाराज श्री की कृपा से ही भागवत ब्रह्म से साक्षात् संबंध हो सका है । अहं की भावना न जाने कहाँ चली गयी ।

आपश्री के अन्तिम बार द्वारका में दर्शन हुए । उस समय परिषद का अखिल भारतीय कार्यकर्ता शिविर था और झाबुआ से कुछ कार्यकर्ता उसमें गये थे । आपश्री के उन सभी को दीक्षा दी । इतना ही नहीं आदिवासी अंचल में सामुहिक दीक्षा के लिए झाबुआ-प्रवास की स्वीकृति भी प्रदान की । लेकिन वह शुभ दिन आने के पूर्व ही महाराज श्री लीला कर गये ।

आदिवासियों में हो रहे धर्मान्तरण के संबंध में आपका चिन्तन मौलिक था । आपका मत था कि जब तलवार के बल पर धर्म-परिवर्तन करवाया जाता था तब विधर्मी शासन के समय भी इन आदिवासियों ने धर्मपरिवर्तन नहीं किया था । फिर भी इन आदिवासियों ने धर्मपरिवर्तन नहीं किया था । फिर आज क्या कारण है कि ये धर्म बदल रहे हैं ? केवल धन ही उनके धर्म परिवर्तन का कारण नहीं हैं । वास्तव में यह हिन्दू समाज की कमजोरी के कारण हो रहा है । हमारे मन में इनके प्रति अपनत्व की कमी है । आपने कहा - 'बाबा ! आप झाबुआ में कोई जगह देखें । मैं यहाँ आश्रम बनाऊँगा ।' गिरिजनों आदिवासियों के लिए आचार्य श्री का हृदय कितना व्याकुल रहता था, इसके प्रत्यक्ष दर्शन

मुझे अनेक प्रसंगों में हुए हैं । मैं तो आश्चर्य चकित हो जाता था कि एक धर्माचार्य के मन में आदिवासियों के प्रति केवल सहानुभुति ही नहीं है । वे इसकी पीड़ा को महसूस करते हैं और उसे दूर करने के लिए निरंतर प्रयास करते हैं ।

मेरा विश्वास है कि वे अपने आप में परिपूर्ण और अगाध थे । जिसने उनमें प्रवेश किया वह बाहर नहीं आया, उनका ही होकर, उनके हृदय में समा गया । उनका आकर्षण-केन्द्र ऐसा प्रबल था कि उनके सम्पर्क में एक वार भी आने के वाद उनके प्रभाव क्षेत्र से बाहर निकल पाना लगभग असंभव हो जाता था ।

झाबुआ में आपकी आज्ञानुसार 'श्री वल्लभ बाल विद्या निकेतन' आरंभ हुआ । आप इस संस्था की प्रगति के प्रति निरंतर जागरुक और सचेष्ट रहते थे । आप कहा करते थे - 'बाबा ! उज्जैन में भी मदनमोहनजी के मंदिर में हमने एक बाल मन्दिर आरंभ किया था । फरनीचर आदि के लिए भी काफी व्यय किया गया था लेकिन वह चल नहीं पाया। आप सावधान रहना । दुनिया वहुत विचित्र बनती जा रही है । सेवा प्रकल्पों के संचालन के लिए वहुत संघर्ष और तप करना पड़ता है । झाबुआ प्रकल्प के लिए जब भी कोई समस्या हुई मैं आपके पास गया और आपने समस्या हल की ।

आपश्री का अध्ययन बहुत व्यापक और गहन था । भारतीय तत्त्वज्ञान के तो आप मर्मज्ञ थे ही, विदेशी विचारकों के गंभीर ग्रंथों का भी आप गहरा अध्ययन करते थे । उनके ग्रंथालय में प्राचीन ग्रंथ तो थे ही लेकिन वे अपने ग्रंथालय को आधुनिकतम ग्रंथों से भी परिपूर्ण देखना चाहते थे । जतीपुरा, बम्बई और कलकत्ता में उनके ग्रंथालयों में प्राचीन और नवीन ग्रंथों का अनूठा संग्रह देखने को मिला । एक वार कलकत्ता में मुझे एक रूसी पुस्तक का सन १९१९ का अंग्रेजी अनुवाद मिल गया । इस तरह की तीन ही पुस्तकें लिखी गयी हैं । पहली अरिस्टाटल की (Organon) आर्गेनान, दूसरी बेकन की Nouun Organon, तीसरी ओमेंस्की की टर्शियम आर्गेनम (Tertium Organon) । मुझे इसी तीसरी पुस्तक का अंग्रेजी अनुवाद मिला था । महाराज श्री ने उसे देखा तो आज्ञा की कि इसका हिन्दी अनुवाद करना चाहिए । आपने तत्काल चेम्बर्स डिक्शनरी और भार्गव अंग्रेजी हिन्दी शव्दकोश मँगवा कर मुझे दिये । हिन्दी अनुवाद करने की आज्ञा की । मैं जो पुस्तक लेकर गया था तत्काल उसकी दो प्रतियों में (जेरोक्स) छाया प्रतिं करवाई । एक प्रति मुझे दी और एक स्वयं ने रखी । पूर्व की दोनों पुस्तकें महाराजश्री पहले ही पढ़ चुके थे । कुछ दिनों वाद तीसरी पुस्तक के सम्बन्ध में आपने कहा कि इसे पढ़ने पर लगा कि इसमें नया कुछ नहीं है । सव अपना ही है थोड़े अन्तर के साथ यह दर्शन की प्रारंभिक अवस्था है ।

एक वार मैं (Yes Minister) 'यस मिनिस्टर' ग्रंथ पढ़ रहा था । मैंने कहा - महाराजश्री यह ग्रंथ लाजवाव है । आपने कहा - 'इसमें वर्तमान का निकट सत्य अंकित है ।'

महाराजश्री से आधुनिक भारतीय और पाश्चात्य ग्रंथों की चर्चा करने पर ज्ञात होता था कि आप तो मानो जीवित विश्व कोश ही हैं ।

आपके लीला प्रवेश को दो वर्ष व्यतीत हो गये किन्तु विश्वास ही नहीं होता कि आपश्री हमारे बीच में नहीं हैं । आपके गहन दार्शनिक चिन्तन, क्रान्तिकारी दृष्टिकोण और रचनात्मक कार्य आपके अमिट और अमर व्यक्तित्व के परिचायक हैं । झाबुआ का आदिवासी क्षेत्र का सेवाकार्य आपका चिरस्थांयी स्मृति चिन्ह हैं । यह आपश्री की धरोहर जिसे हमें संभालकर ही नहीं रखना है, अपितु सजाना और संवारना भी है ।

धर्म के महान् प्रेरणा स्रोत

डॉ. विनोद दीक्षित, गोवर्धन (मथुरा)

पूज्यपाद प्रातः स्मरणीय श्री श्री १०८ श्री रणछोड़ाचार्य प्रथमेश सोमयाजी वाजपेय दीक्षित जी की कृपा चन्द्र सरोवर (गोवर्धन) मथुरा में मुझे पर हुई । आप चन्द्र सरोवर पर पुष्टि श्री महिला समिति के तत्वावधान में श्रीमद् भागवत पारायण के आयोजन में बिराजे थे । तब श्री मासी गंगा गोवर्धन में स्थित श्री महाप्रभुजी की बैठक के मुखिया श्री प.म. ईश्वर दास जी ने मुझ से कहा वल्लभ सम्प्रदाय के प्रथमपीठ के आचार्य आये हैं । दर्शन करना । मैंने तव तक वल्लभ कुल शव्द अवश्य ही सुना था, पीठ आचार्य सम्प्रदाय के अनभिज्ञ था । परन्तु प्रथमेश जी के दर्शन के बाद मेरी स्थिति अलग ही हो गयी, जिले में लेखबद्ध करने में अपने आपको सक्षम नहीं समझ पा रहा हूँ । केवल कुछ विशेष घटनाएँ निवेदन कर रहा हूँ ।

चन्द्र सरोवर पर आपश्री के केसर स्नान वैष्णवजनों द्वारा कराया जा रहा था । मैं वहीं पहुँच गया । आपकी दृष्टि मुझ पर पड़ी, वोले - 'कहाँ से आये हो ?' मैंने कहा - 'गोवर्धन से' । 'क्या करते हो ? शिक्षा कहाँ तक प्राप्त की है ?' मैंने सभी कुछ बता दिया । तब बोले यह वैष्णव पद गाते हैं आप मन्त्र बोलो । मैंने मंत्र बोलना प्रारंभ किया। प्रसन्न मुद्रा में बोले - धर्म के कार्य में लगो । संगठन करो । मैंने पूछा- कैसा संगठन' इसी समय कुछ वैष्णव गोवर्धन से आये । आपश्री ने प्रश्न किया - 'परिषद् की शाखा स्थापित की या नहीं ?' सवने कहा - 'कृपानाथ नहीं की । कुछ पारिवारिक सामाजिक समस्यायें नहीं करने दे रही हैं ।' तभी मुझे भी याद आया मेरे मौसी के लड़के ने भी कहा था परिषूद बनाने के लिए मैंने उसे कहा था कि वता दूँगा । मुझे पता नहीं था कि भविष्य में परिषद् की सेवा में जुड़ जाना भी पड़ेगा । फिर आपश्री मेरी तरफ देखने लगे । तभी मेरे मुख से निकला - 'साहव मुझे कण्ठी दे दें । मैं तब तक यह तो जानता ही नहीं था कि आचार्य श्री से वार्ता करने में किन मर्यादाओं अथवा कौनसी सम्पर्क भाषा की आवश्यकता होती है । आपश्री ने तुरंत कहा कि व्रत कर लो कल, परसों कण्ठी

दे देंगें । पीछे पता चला कि कण्ठी नहीं माँगते, नाम दीक्षा या व्रह्म सम्बन्ध के लिए निवेदन करते हैं । मैंने कहा, कुछ भी हो, मैंने चाहे जिस प्रकार से कहा हो पर उन्होंने आज्ञा प्रदान कर दी है । यह व्यक्ति महान सरल है । ऐसा मैंने वहुत एकत्र वैष्णवजनों के बीच कहा तो कुछ वैष्णवजन को वुरा लगा । 'व्यक्ति' शव्द पर आपत्ति रही । फिर आपश्री की कृपा हुई, नाम दीक्षा /व्रह्म संवंध एक साथ प्रदान किया, निजी सेवा प्रभु के सम्मुख श्री महाप्रभु जी की वैठक में चन्द्रसरोवर पर कृपा की थी । आज्ञा की , गोवर्धन में परिषद् स्थापित करो । मैंने कहा -आपकी कृपा होगी तो जरूर परिषद् गठित होगी :

आप व्रह्मसंवंध से पहले वैष्णवों से कहते, धर्म की सेवा करो तो कण्ठी लो अन्यथा रहने दो । कृपा के नाम पर वोलेः कृपा ढकोला भरी लेओ । ऐसे सरलचित्त महान विभूति थे । परिषद गोवर्धन में गठित हुई । आपश्री पधारते तो गोवर्धन कृपा करने एवं अवश्य वचनामृत हेतु अवश्य पधारते थे । जब कभी कोई बात होती, विनोद जी आपको तो सूरदास जी चन्द्र सरोवर पर पकडकर लाये तव तुम आये हो हमारे पास । मैं निवेदन करताः सब आपश्री की कृपा है । कृपानाथ आपकी आज्ञा से ही में सर्वप्रथम गोवर्धन शाखा में मंत्री बनाया गया । पीछे मुझे परिषद से निम्न प्रकार से जोड़ दियाः राजस्थान व उत्तरप्रदेश का संगठन मंत्री, धर्म संस्कार शिविरों का पंजीयक , परिषद की केन्द्रीय कार्य समिति का सदस्य । बहुत कम समय में आपश्री की कृपा के कारण पुष्टि सृष्टि के दर्शनों का लाभ मुझे मिला । और और मिल रहा है । पूज्य आचार्य प्रवर प्रथमेश जी के संपर्क में जो भी आता था , मेरा पूरा विश्वास है वह अछूता नहीं रहता था । आपश्री की कृपा पर ही विशेष है । भले ही आज किसी वैष्णव से चर्चा करें वह भी यही कहेगा मुझ पर वहुत कृपा थी । और यह भी वहुत सुनने को मिलता है प्रथमेश वावा अकिंचनों पर ज्यादा ही कृपा करते थे । यह वैष्णवजन की दृढ़ आस्था है । मुझे हमेशा पुत्रवत् स्नेह दिया करते थे । मुझे आपके द्वारा प्रेषित पत्रों के माध्यम से भी स्नेह प्राप्त होता था।

एक दिन बिना सूचना के घर पधारे मैं तो सकपका गया । बोला -आप आज्ञा कर देते, मैं आपकी सेवा में पहुँच दाता , मुझे पता नहीं चला था कि आप जतीपुरा पधारे हैं। मैं कुछ सत्कार भी नहीं जुटा पाया । मुझे आदेश दिया कि चलो, लेने आया हूँ । फरीदावाद में परिषद् की शाखा की बैठक लेनी है ।ऐसे अहैतिक सरव कृपालु थे आपश्री । एक बार कुछ कार्य के लिये जतापुरा में आज्ञा की । मैंने पेढीं में कहाः पेढी वालों का भी जो उत्तर रहा मैंने कार्य कर दिया । दूसरे दिन सन्मुख पहुँचते ही आप वोले वैद्यजी आपके हम कर्जदार हैं । मैंने कहा कैसे । वोलेः कल जो कार्य आपको वताया गया था वह आपने करा दिया । मैंने निवेदन किया - मैं पेढ़ी से सब कर लूंगा । वोलेः नहीं अधिकारी जी को बुलाओ । खवासजी को बुलाने के लिए भेज दिया । मैंने सोचा , मैंने कुछ भी नहीं कहा, परन्तु आपश्री ने उसे कैसे समझ लिया । यहाँ मेरे इस कथन का अभिप्राय

मात्र इतना भर है कि आपश्री अपने कृपा पात्र वैष्णवों के अन्तः करण की बात जानकर उनकी चिन्तायें दूर कर दिया करतें थे । क्योंकि अन्यान्य अनेक वैष्णवों के साथ भी इस प्रकार की आश्चर्य पूर्ण घटनायें आपश्री के सानिध्य में हुई हैं ।

आपश्री मुझे जो भी आज्ञा करते थे, उसकी पालना मन वचन करम से मैं करता था । मुझे सोमयज्ञ, छप्पन भोग, कुम्भ मेलों, आचार्यों के प्राकट्य उत्सवों, में सेवा सानिध्य का अवसर प्रदान करते थे, व अन्य अवसरों पर भी मुझ पर अपनी कृपा की अनुपम वर्षा किया ही करते थे । आपके सानिध्य में श्री हरिराय जी का प्राकट्य उत्सव जैसलमेर में मनाया गया । वहाँ के पूर्व महाराज ने आपश्री की पधरावनी सेवा की । तथा आपके व्यक्तित्व से प्रभावित हुए । प्रत्येक सम्प्रदाय में आरंभ में आचार्य प्रवर होते रहे है, आगे भी होते रहेंगे । पर प्रभु कृपा व पुण्यफल से शताब्दियों में आपश्री जैसी विभूतियों का प्रादुर्भाव होता है, जो अपनी समर्पण भावना, कर्मठता, उदारता व बौद्धिक प्रखरता से सम्प्रदाय व समाज को आलोकित कर जयघोष की दुंदुभी बजाकर उसे दिशा निर्देश प्रदान करते हैं । पूज्यपाद प्रथमेश जी इसी प्रकार के एक अलौकिक स्तम्भ प्रकाश थे । उन्होंने अपने वचनामृतों से अज्ञान से तिमिर को चीरकर ज्ञान के प्रकाश का आलोक इस पृथ्वी पर फैलाया ।

परमपूज्य गोस्वामी जी प्रथमेशजी महाराज ने मन्दिरों का संचालन व ऐतिहासिक स्थलों की सुरक्षा के संयोजक के रूप में काफी सजगता दिखलाई और इस हेतु दो पदयात्रायें भी करी । शारीरिक, मानसिक एवं आर्थिक विकास की दृष्टि से स्थान स्थान पर बल मन्दिर, औषधालय, सेवासदन वल्लभाश्रय, विकास वीथी एवं पी.पी. एस की स्थापना कराई ।झाबुआ आदिवासी प्रकल्प का संचालन किया जहाँ सैकड़ों बालक आज भी शिक्षा प्राप्त कर रहे है गोवा लोहागढ़ एवम् गंगासागर में महाप्रभुजी की गुप्त बैठकों को पुनः प्रकट किया । दिल्ली में 7नवम्बर 66के ऐतिहासिक गौवध बंद महाभियान में अनेक वैष्णव अनुयाईयों के साथ आपने भाग लिया। आपकी प्रेरणा से देश के स्थान-स्थान पर संगीत एवम् कीर्तन के प्रशिक्षिण शिविर लगाये गए और आज भी लगाए जाते है । महाप्रभु वल्लभाचार्य तथा महाकवि सूरदास को पंच शताब्दी समारोह को व्यापक रूप से राष्ट्रीय समिति के माध्यम से आपने पूर्ण कराया ।

समग्र मानवता, विदेशी सभ्यता की चकाचौंध की गहन अंधकार में भटकती न फिरे तथा युवा पीढ़ी धर्म के मर्म को आत्मसात् कर आदर्श व मार्ग के सिद्धान्तों का अनुसरण करती रहे इसी भावना से आप नित्य परिष्कार का पथ प्रशस्त करते रहे हैं ।

जब कभी मैं दर्शन हेतु समक्ष पहुँचता, तो कहते आप भले आ गए । मुझ पर आपकी कृपा एक अलौकिक थी । उसी कृपा का परिणाम था कि नित्य लीला में प्रवेश के समय भी आपने मुझे अपना सानिध्य प्रदान किया । जबकि मैं कोटा आने के लिए टिकिट भी ले चुका था । तभी पता चला कि मेल दो घंटा विलंब से आयेगा । समय

गुजरने की दृष्टि से मैं मथुरा स्टेशन पर घूम रहा था, तभी आपश्री के सेवक भीतरिया स्टेशन पर मिले और मुझे बताया कि आपश्री फरीदाबाद पधारे है । मैंने कहा मुझे तो 4-1-90को कोटा दर्शन हेतु आज्ञा करी थी । तभी ऐलान हुआ कि मेल पाँच घंटे विलंब हो चुका है। तब मेरे मन में यह विचार आया कि आप कलकत्ता पधारने वाले है तो अब दर्शन कर ही लूँ । और दर्शन करके डीलक्स से फरीदाबाद से वापस चला आऊँगा । और मैंने तत्काल यह शुभ विचार आते ही कोटा का टिकिट तो वापस कर दिया । और फिर बस द्वारा लगभग 3 बजे फरीदाबाद पहुँच गया ।

पहुँचते ही पता लगा कि पूज्य आचार्य का स्वास्थ्य ठीक नही है । चिकित्सक ने निमोनिया बताया है । तभी भीतर से आज्ञा आई और मैंने जाकर प्रणाम किया । हमेशा की भाँति वही वचनामृत कानों में गूँजी -भले आये । प्रभु कोई न कोई सहयोग भेज ही देता है । मैने विनती की किसी अस्पताल में दिखा लेवे । तो आज्ञा की कि डाक्टर को दिखा लिया है । तथा हकीम श्री मोहन लाल जी भी चिकित्सा कर रहे है । फिर मैंने भी रक्तचाप देखा । कुछ कम था । हकीमजी से चर्चा की और आपश्री को अधिक तकलीफ न हो इस हेतु मूत्रपात्र व शौचपात्र वहीं मँगवालिए । और पलंग पर पूर्णतया पीढ़ने की विनती की । प्रार्थना स्वीकार कर आप पलंग पर लेट गये । फिर रात्रि 11वजे तक धर्मरक्षा, सेवा परिषद सेवा के लिए आज्ञा करते रहे, कानों में रस घोलते रहे, वार्ताक्रम के अनवरत रहते देख कर मैंने उनसे निद्रा लेने हेतु निवेदन किया । क्योंकि अधिक बातचीत करने से भी श्वास प्रक्रिया तीव्र होती थी और लेटने से भी श्वास प्रक्रिया में रोधन प्रस्तुत होता था । इसलिए चारों तरफ लगाकर खवासजी व नवल जी से कहा आप महाराज श्री के पास जागते हुए सोना । स्वास्थ्य बराबर नहीं है । मैं बाहर आकर सो गया। आपश्री ने सुबह ही छः बजे पूछा कि वैद्यजी सो रहे हैं या जाग रहे हैं । तो मैं तुरंत बोला कृपानाथ जाग रहा हूँ । आज्ञा हुई रक्तचाप देखिए । आज्ञा पालन किया , रक्तचाप सामान्य था । फिर बोले सांस सामान्य क्यों नहीं हो रहा है । मैंने निवेदन किया या तो ब्रोफिलिया बन गया है या ब्रोकाइटिस ही कारण है । इसके तुरंत ही बाद में डाक्टर को बुलाकर लाया । रक्त जाँच हेतु व्यवस्था की । इसी समय की मोहनलाल हकीम जी भी आ गये, तथा फरीदाबाद के अन्य वैष्णव भी आये । डॉक्टरजी ने दवा लिखी, मैं लेकर आया, तो देखा सांस और गतिवान हो गया है । मैंने नवलजी को कहा गाड़ी लाओ व आक्सीजन की व्यवस्था करो, आपश्री को अस्पताल ले चलना है । खबासजी से कंघा लिया । मैंने बाल व कपड़े सम्भाले, आपश्री की पीठ पर एक हाथ और एक हाथ से छाती मसल रहा था । तभी आप बोले इंजेक्शन लगाओ । फिर आज्ञा करी श्री महाप्रभु जी के चरणस्पर्श कराओ । मैंने मुखिया जी से कहा, वह चरणवस्त्र लाये, मस्तक पर लगाया, फिर मेरा हाथ पकड़कर छाती पर लिया, मैं वक्षस्थल को मसलने लगा, तुरन्त आप नित्यलीला में पधार गए ।मैं व सामने खड़े हकीम मोहनलाल जी देखते के देखते रह

गए, कुछ भी नहीं कर सके । गाड़ी व आक्सीजन दरवाजे पर ही रह गए और इस प्रकार पौषशुक्ला अष्टमी गुरुवार 4 जनवरी 90 का वह अशुभ दिन हम वैष्णवों के लिए ऐसा काल बनकर आया कि हमारे प्रेरणास्त्रोत, श्री प्रथमेश हमें बिलखता छोड़ गए । जतीपुरा में आपश्री का श्री अंग अग्नि को पूज्यपाद लाल मरण जी द्वारा समर्पित किया गया । दशास्नान में सातों पीठों के आचार्य पधारे, तथा अन्य गोस्वामी बालक भी पधारे । और भावान्जलि सभा में सभी के विचार बहुत ही आदर सूचक एवं पुष्टिमार्ग के स्तम्भ कह कर पुकारा । अन्तराष्ट्रीय पुष्टीमार्गीय वैष्णव परिषद के केन्द्रिय कार्यकारिणी के पदाधिकारी सदस्यों ने भावान्जली सभा का संयोजन किया ।

(एकात्म साप्ताहिक : प्रथमेश स्मृति अंक से साभार)

प्रथमेश तो प्रथमेश ही थे

- हकीम मोहनलाल महता, फरीदाबाद

श्री प्रथमेशजी अन्तर्राष्ट्रीय पुष्टि मार्गीय वैष्णव परिषद् के शिरोमणि थे । आपश्री ने अपना सारा जीवन परिषद् की सेवा में लगा रखा था । वे इस कार्य को भगवद् सेवा समझ कर करते थे । उन्होने परिषद् के कार्य को कितना विस्तार दिया है, यह तो प्रत्येक वैष्णव जानता है । उन्हें यदि कोई चिन्ता रहती तो केवल परिषद् की ही रहती थी । उन्हें यदि पुष्टिमार्ग प्रचार-प्रसार करन् में आपश्री ने अपना जीवन लगा दिया । लाखों वैष्णवों को कण्ठी-ब्रह्म सम्बन्ध करा के उनका उद्धार किया । आपके जीवन का लक्ष्य वैष्णव परिषद् का काम करना था ।

कलियुग में अवतार --

आपश्री धर्म के स्तम्भ थे, धर्माचार्य थे मैं तो इन्हें इस युग का अवतार समझता हूँ कारण ? भगवान श्री कृष्ण के कहने के अनुसार "यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत अभ्युत्यानं अधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्" (गीता)

भगवान का यह कथन आप पर चरितार्थ होता है । इस कलिकाल में जब घोर पाप हो रहे हैं, गौवध हो रहा है, अधर्म फैला हुआ है, धर्म और धर्मावलम्बियों पर संकट आया हुआ है, ऐसे में आपने धर्म की रक्षा की, धर्म का प्रचार किया, पुष्टिमार्ग का प्रचार किया, धर्म की स्थापना की । आप महान विद्वान थे, प्रभावशाली वक्ता थे । आपके दर्शन मात्र से वैष्णवों के हृदय पवित्र तथा प्रसन्न हो जाते थे, आपके मुख मण्डल पर तेज था, प्रभाव था, दिव्यता थी । जैसे आपश्री के पूर्वज श्री श्री गोस्वामी विट्ठल नाथ जी के प्रभाव में बड़े-बड़े राजा महाराजा आये थे, वैसे ही आपश्री के प्रभाव में बड़े-बड़े राजा महाराजा बड़े-बड़े नामी सेठ आपश्री के सेवक हैं । जैसे श्री गुसाईंजी के और सेवकों के

अतिरिक्त, बादशाह अकबर, बीबीताज रसखान, अलीखाँ शरण में आये वैसे ही आपश्री के सेवक मुसलमान भी हैं, एक अमरिकन पुष्टि सेवक "श्यामदास" बन गया, जो आज भी पुष्टि का प्रचार करे रहे हैं । आपश्री श्री वहु जी महाराज के साथ अमेरिका आदि विदेशों की यात्रा करके धर्म का प्रचार कर आये हैं । आप तन-मन-धन से पुष्टि सेवा करते रहे । आपश्री के अनमोल तथा प्रभावशाली वचनामृत को जो सुनता वही बड़ा प्रभावित होकर आपकी जय-जयकार करता, आपकी विद्वता की प्रशंसा करता, विद्वान भी सराहना करते, चारों तरफ आपके प्रभाव की योग्यता की गुणों की तेज की प्रशंसा है । प्रथमेश जी तो प्रथमेशजी ही हैं ऐसा सब कहते हैं ।

बहुमुखी प्रतिभा के धनी :

आप बड़े से बड़े वैद्य भी थे, बड़े से बड़े डॉक्टर भी थे, वकील थे, गायक थे, हर साज (वाद्ययन्त्र) आप बड़े प्यार से बजाते थे, दवायें अपने पास से सबको निःशुल्क बाँटते थे । अपने जीवों को अच्छे-अच्छे परामर्श देते थे । जब आप मस्ती में आते थे तो श्री ठाकुर जी को अच्छे-अच्छे मधुर रागों में पद सुनाते थे । आप का सब जीवों पर स्नेह रहता था ।

सबसे प्यार करते थे जिससे हर वैष्णव यह समझता था कि आपश्री की मुझ पर विशेष कृपा है ,आप सर्वगुण संपन्न थे । आप में सारी कलाएँ विद्यमान थी ।

फरीदाबाद में प्रथमेशजी :-

जैसे की श्री ठाकुरजी ने व्रज में ग्वाल-बालों के साथ लीलाएँ की ' भूलगये ठकु राई' वैसे ही श्री प्रथमेशजी ने लीलाएँ अनेकं प्रकार की यहाँ की,वे जब (फरीदाबाद) पधारते थे तो एकदम सादेपन में पधारते थे ।हमें निःसंकोच अपना प्यार देते थे , शुरू-शुरू में कई सालों तक कई बार ,हमारे ही निवास पर बिराजते थे और वचनामृत सुनाते थे । आपने पुष्टि सृष्टि ,वढ़ाई । और सैकड़ो जीवों की कंठी -ब्रह्मसंबंध कराया । हम लोगों को आज्ञा करते कि पंजाबी मुल्तानी भजन कहो ।

हम सब अपनी भाषा के भजन दोहरे कहते जिन्हें आप प्रेम पूर्वक सुनते फिर उनका भावार्थ पूछते । वे बड़े प्रसन्न होते और तारीफ करते । कई बार आपश्री मस्ती में आकर हारमोनियम वजाते ,कई वार ढोलक वजाते । कई बार प्रेम में आकर स्वयं गाते, उनका स्वयं गाना-वजाना हमारे लिये अपार खुशी की बात था । हम सब मस्त हो जाते थे।उंनकी वही वातें थी "भूलगये ठकुराई " वाली उक्ति चरितार्थ होती थी ।

हम भोले-भाले जीव पुष्टि की मर्यादा को नही समझते थे , फिर भी हमें प्यार करते थे । कई बार मैं उनकों उर्दू के शेर सुनाता, तव वे वड़े खुश होकर कहते -" हकीम साहब मुझे उर्दू पढ़ाओ वह कितने दयालु थे , कृपालु थे । इतना सम्मान करते थे । एक वैष्णव बहन ने मुझसे कहा कि आप प्रथमेशजी से विनती करो कि हमारे घर भी पधारें।

तो मुझसे पूछा - "हकीमजी यह क्या कह रही है ?" मैंने कहा - "कृपा नाथ ! इनकी बड़ी इच्छा है आप इनके घर पधारें ।" तो इस पर आपश्री ने आज्ञा की - "चलो, अभी चलते हैं ।" और उसी समय चल पड़े । हमारी गली में 32 मकान हैं तो आपश्री सभी मकानों पर पधारे । बड़ी खुशी से प्रेम से सभी के घरों को पवित्र कर सब जीवों को प्रसन्न किया । तब से उस गली का नाम कुंजगली रखा गया, जो गोपी कोलोनी ओल्ड फरीदाबाद में स्थित है । यह सब कृपा बहिन बन देवी जी की है, उनके द्वारा ही महाराज जी सर्वप्रथम हमारे नगर में पधारे और हमें महान सुख प्राप्त हुआ ।

एक दिन मैं अपने दवाखाने में मरीजों को देख रहा था । आवाज आई - "हकीम साहब ! हमको भी दवाई मिलेगी ।" देखा तो महाराज श्री प्रथमेशजी थे । मैं हैरान हो गया । खड़ा हुआ दण्डवत की और कहा - 'जय ! आप ?'

बोले - 'दिल्ली जा रहे थे, सोचा हकीम जी से मिलते चले ।' आपश्री मेरी ही सीट पर विराजमान हो गये । यह उनका दयालुता की ही तो बात थी, जिन्हें लोग सादर बुलाते हैं, पधारने पर हार्दिक स्वागत करते हैं आज वे स्वयं मेरी दुकान पर पधारे हैं, तभी तो मैंने कहा कि 'भूल गये ठकुराई'

एक बार करीब रात के एक बजे आवाज आई - 'हकीम मोहन लालजी - - - --' दुबारा फिर वही आवाज आई । सोचा, अरे यह तो श्री प्रथमेश जी की आवाज है बाहर आया तो देखा स्वयं श्री प्रथमेश जी ही थे ।

'जय ! आप ? यह सच है या मैं स्वप्न देख रहा हूँ ?' आप बोले - सच है । तो प्रभु अन्दर आइयेगा । आपश्री ने आज्ञा दी आपने जो मेरी कोठी वनाई है उसका रास्ता भूल गया हूँ बहुत देर से ढूंढ रहा हूँ, नहीं मिला । आप चलो मुझे वही पहुँचा दो, वहुजी महाराज भी कार उनके पास थीं, बैठा कर ले गये मेरे ऊपर उनकी विशेष कृपा थी । वैसे ही उनकी कृपा सब पर थी । जैसे श्री ठाकुर जी की व्रज में सब पर कृपा थी परन्तु हर गोपी, ग्वाल यह समझता था कि मेरे ऊपर विशेष कृपा है ।

आपश्री ने मुझे आज्ञा दी हकीम जी आप मेरी कोठी तैयार करो उनकी आज्ञा से दो साल में जाकर कोठी वनी । कई वैष्णवों ने सेवा देने को कहा, एक भाई ने कहा - हकीमजी ! एक कमरा मैं बनवा देता हूं । परन्तु आपश्री ने मना कर दिया कि नहीं ऐसा नहीं करना । किसी से कुछ स्वीकार नहीं किया । कोठी तैयार हो गई । श्री बहुजी महाराज ने आज्ञा करी - हकीम जी डवल स्टोरी वना दो ।

जय ! यह कार्य वहुत मुश्किल है मेरी हिम्मत नहीं पड़ती । बहुजी ने आज्ञा दी कुछ भी हो बनवा दो । मैंने विनती की । जय ! फिर मुझे आशीर्वाद दो, बल दो तो महाराज भी विराजमान थे वोले आशीर्वाद देते हैं, आप इसे वनवाओ । उनका आशीर्वाद पाकर मुझमें फिर से चुस्ती, बल आ गया तो डवल स्टोरी वन कर तैयार हो गयी ।

आपश्री बहुत खुश हुए मुझे उपरना प्रदान किया आशीर्वाद दिया । यह कोठी 18 सेक्टर में 83 नं. है आपश्री यहीं विराजमान होते रहे । एक दिन जब युगल सायंकाल विराजमान थे, मैंने विनती की जय ! आप तो अब अपनी कोठी पर ही विराजते हैं । आपश्री के चरण मेरे घर पधारते ही नहीं । मैंने कोठी बनाई तो मुझे तो घाटा पड़ा । वे मुस्कराकर बोले - नहीं-नहीं हम अभी आप के घर चलते हैं । आपश्री पधारे। ऐसे थे मेरे महाराजश्री।

आपश्री ने आज्ञा की कि अपने सारे क्षेत्र में पुष्टि-प्रचार करो । उसके लिये आपश्री ने यहाँ भक्ति वर्धिनी गाड़ी भेजी । जिस पर यहाँ के सब वैष्णवों ने नये फरीदाबाद के सभी सैक्टरों के मंदिरों में जाकर पुष्टि प्रचार किया । जंगपुरा दिल्ली भी हम लोग गये, जहाँ-जहाँ भक्ति वर्धिनी गई लोगों ने बड़ा उत्साह दिखाया, बड़े प्रभावित हुए । यह सब प्रथमेश जी की कृपा थी ।

श्री महाप्रभु पधारे ---

आपश्री की फरीदाबाद के ऊपर जो विशेष कृपा हुई । आपश्री ने श्री महाप्रभुजी के स्वरूप को फरीदाबाद पधराया । तिथि 10-8-84 को महाराज श्री बहुजी महाराज श्री महाप्रभुजी के गाड़ी से पधराकर फरीदाबाद लाये, यहाँ से एक बस में वैष्णव दिल्ली रेलवे स्टेशन पर श्री महाप्रभु की अगवानी के लिये, उन्हें पधराने के लिये गये । बड़े प्रेम श्रद्धा से पधराया गया । दिल्ली से दो बसे आई और भी गाजियाबाद तथा अन्य शहरों के बहुत से वैष्णव आये तिथि 12-8-84 को शोभायात्रा निकाली गई । सैकड़ों वैष्णवों ने उसमें भाग लिया । बड़ी मस्ती का आलम था । देवियाँ आगे आगे कलश लिये चल रही थी । भजन कीर्तन करते नाचते गाते शोभायात्रा ही शोभा बढ़ा रहे थे । ढोल बाजे बज रहे थे । श्री महाप्रभुजी के स्वरूपजी बड़े सुन्दर सिंहासन पर विराजमान थे । मौसम गर्मी का था । सड़कें तप रही थी, उस पर भी श्री प्रथमेशजी महाराज नंगे पैर चल रहे थे । मैंने जय जय विनती की जय आप को श्रम हो रहा होगा । मैं खड़ाऊँ लाता हूँ , आप उनको धारण करलें, आपश्री न माने, आज्ञा की धर्म शरीर से बहुत ऊँचा है, बड़ा है । आप प्रेम में मस्ती में नंगे पैर चलते रहे उन्हें इस भयंकर गर्मी का तनिक भी भान नहीं हो रहा था । महाराज श्री उस यात्रा में ऐसे शोभा दे रहे थे जैसे तारों के मध्य चन्द्रमा वेद मन्त्रों द्वारा स्थापना समारोह सम्पन्न हुआ । उसके बाद धर्म सभा हुई सभी वैष्णवों को महाप्रसाद लिवाया गया ।

आखिर वह मनहूस दिन भी आया जिस दिन हमारे प्यारे श्री प्रथमेशजी को हम से सदा-सदा के लिये छीन लिया । हम देखते ही रह गये । 3 जनवरी 1990 को आप प्रातः कोटा से फरीदाबाद देहरादून एक्सप्रेस से पधारे । प्रातः सात बजे मुझे फोन पर बताया गया कि प्रथमेशजी पधारे हैं । उन्हें तकलीफ है । आपको याद किया है । सरदी पूरे जोर पर थी । कोहरा पड़ रहा था । हम फौरन चले गये । दर्शन किये दण्डवत की, देखा तो आपश्री की छाती में दर्द है । बी.पी. नापा ठीक था । आपश्री सब आयुर्वेदिक

अंग्रेजी दवाएँ जानते थे । जय आपश्री की क्या राय है, श्रृंगभस्म सितो पलादि, अभ्रक भस्म आपश्री को कैसी रहेगी ? आप कहने लगे ठीक रहेगी । दुकान खोल कुछ देर बाद जा कर पूछा दर्द कैसा है ? बोले - "अभी ठीक नहीं है ।" मैंने पूछा जय ! किसी अच्छे डॉक्टर को बुलावें ? आपश्री ने मना किया । अँगीठी लगाई गई । हीटर चलाकर कमरा गर्म किया गया । रबर की गर्म जल की बोतलों से सिकाई की गई । दिल्ली से भी आपके सेवक आये हुए थे इस अवसर पर संयोग वश डॉ. विनोद दिक्षित भी आ गए थे । उन्होंने ने भी कई दवाएँ दीं दो इंजेक्शन भी लगाये । 10.30 वजे सुबह में फरीदावाद के माने हुए डॉ. के.के. मिश्रा, एम.डी. को बुलाया गया, उन्होंने सारा चैक-अप अच्छी प्रकार से किया । मैंने पूछा - "हार्ट तो ठीक हैं ?" डॉ. बोले - "बिल्कुल ठीक है । सर्दी से दर्द है । दवाएँ लिख दी है चिन्ता की कोई बात नहीं हैं । अभी ठीक हो जायेंगे ।" रात को साढ़े आठ बजे आपश्री ने कहा - "हकीम जी ! आप घर जाइए । अब मुझे आराम है आपभी जाकर आराम करें ।" मैंने आपको, प्रेमजी को बहुत परेशान किया है । मैंने कहा - "जय ! ऐसा मत कहिए, हमें कोई कष्ट नहीं है, हमें तो आपश्री स्वस्थ चाहिये । जय ! आप की आयु लम्बी हो, मेरी आयु भी आपको लगे" बोले नहीं ऐसा नहीं कहते। मेरी आँखों में आँसू बहने लगे । आपश्री ने आज्ञा दी मैं चला आया आपश्री को भी नींद आ रही थी । रात भर महाराजश्री के स्वास्थ चिन्ता रही । श्री ठाकुरजी से उनके स्वास्थ्य के लिए प्रार्थना करते रहे । सवेरे सात बजे जा कर दण्डवत कर पूछा जय [illegible] दर्द कैसा है ? कहने लगे - 'आराम है, दर्द बहुत कम है, अब कमर का दर्द है ।" मैंने कमर पर अमृताजन लगाया गर्म जल की बोतल रखी । खवासजी और विनोद जी बराबर सेवा में लगे रहे । आपश्री को खाँसी के साथ कफ आ रहा था । कफ लगातार निकलता रहा आपश्री ने पूछा - "हकीमजी ! मुझे दमा तो नहीं हुआ ?" "नहीं जय राज आप को दमा विल्कुल नहीं है ।" कहने लगे --"मैं बोलूँगा कैसे ? परिषद् का काम कैसे होगा ?"

"जय आप ठीक हो जायेंगे ।" हालात बिगड़ने लगी मैं दोबारा डॉक्टर से सम्पर्क किया । इंजेक्शन दिये गये । आपश्री को बैचेनी वहुत हो रही थी, मैंने [illegible]ती की - "जय ! बहुजी महाराज को फोन कर दूँ ?" आपश्री ने कहा - " हाँ कर दो ।" आपश्री को वैचेन देखकर फिर डॉक्टर को बुलाया । उन्होंने कहा इनको आक्सीजन चढ़ेगी । चिट्ठी लिखकर दी एस्कार्ट हास्पिटल ले चलने को कहा । गाड़ी मँगाई गई । आपश्री का दिल हास्पीटल जाने का नहीं था । कहने लगे - "हकीमजी ! पंखा चला दो । दम घुटा जा रहा है ।" पंखा चलाया गया । दिक्षित जी ने दो इंजेक्शन दिये । आपश्री ने इंजेक्शन के लिये कहा कि यह डोज ठीक है । थोड़ी देर में आपश्री ध्यान अवस्था में 'श्री कृष्णः शरणं मम' का जाप करते रहे, अपनी ही नब्ज पर आपश्री ने दूसरा हाथ रखा, फिर वह हाथ हटाया, मैंने नब्ज पकड़ी तो आप एकदम गिरने लगे मैंने संभाला । आपश्री के मुख से तीन बात वायु सी निकली शरीर ढीला पड़ गया । मैंने नब्ज देखी "जय -

जय'' पुकारा परन्तु वे तो लीला कर चुके थे । डॉक्टर ने आकर देखा, बोले - ''यह तो चले गये ।'' गाड़ी भी मँगाई थी हस्पताल के लिये उसे वापस भेज दिया । दिल की दुनिया लुट गई हम खामोश रह गये कांरवा गुजर गया गुबार देखते रहे ।

महाप्रभु वल्लभाचार्य के अंशावतार

- पं. कृष्णचन्द्र शर्मा, तर्क भास्कर, दिल्ली.

पूज्यपाद गोस्वामी श्री प्रथमेशजी महाराज महाप्रभु महाप्रभु श्री मद् वल्लभाचार्य के अंशावतार थे, आपश्री का जीवन श्री कृष्ण मय था । आपका अपार तेज और प्रेम दर्शन करने वालों को आकर्षित कर लेता था । आपश्री की दिनचर्या वेदानुकूल थी । आपश्री भारतीय संस्कृति एवं वैष्णव समाज की उन्नति के लिए कार्य करते रहे । आप भारतीय संस्कृति के इतिहास में सदा स्मरणीय रहेंगे । भारतीय समाज आपश्री का ऋण नहीं चुका सकेगा ।

अमिट छाप

- श्री निरंजन जमींदार, इन्दौर.

पूज्य प्रथमेशजी प्रकांड विद्‌वान और पुष्टिमार्ग के अधिष्ठाता व्याख्याकार थे । मेरा उनसे संपर्क कुंभनदासजी झालानी और श्री सीताराम दास जी के कारण था । उन्होंने गीता समिति में महाप्रभु वल्लभाचार्य और गीता पर अविस्मरणीय प्रवचन दिया था । उस अवसर पर उनके अमेरीकी शिष्य श्यामदासजी पधारे थे ।

उनका पाँडित्य धर्म ग्रन्थों पर तो था ही पर वे आधुनिक विचार धाराओं के नए ग्रंथ भी पढ़ते थे । और अपने पुस्तकालय में रखते थे । सीतारामदासजी से यह ज्ञात हुआ ता कि महाराजश्री के पुस्तकालय में नक्सलवाद पर भी पुस्तकें हैं । श्री सीतारामदासजी संस्कृति केन्द्र के पुस्तकालय से जो पुस्तकों के नाम ले जाते थे, महाराजश्री उन्हें मँगवाकर पढ़ते थे ।

महाराजश्री ने झाबुआ के वनवासी क्षेत्र में जो प्रकल्प प्रारंभ किया है वैसे प्रकल्प अन्य एक दो ही होंगे । मैं उस प्रकल्प के प्रारंभ से जुड़ा हूँ । पुष्टि मार्गीय न होने पर भी महाराजश्री ने वहाँ मुझे अध्यक्ष वनाने का कहा था पर मैंने कार्य की अधिकता के कारण क्षमा माँग ली थी । श्री सीताराम दासजी इंदौर यात्रा में मुझसे मिलते रहे हैं और वे बतलाते थे कि महाराज श्री मेरे सहयोग की जानकारी लेते रहते हैं ।

पूज्य महाराजश्री के विषय में एक संस्मरण प्रसिद्ध अभिभाषक श्री शंभुदयालजी

सांघी ने सुनाया था । किसी कानूनी मुद्दे पर महाराजश्री ने उनके सम्मुख एक प्रारुप लिखवाया था । जिसमें महाराजश्री की कानूनी शैली और उसकी पकड़ देखकर अभिभाषक श्री सांघीजी भी चकित हो गये थे ।

पूज्य महाराज श्री को मैंने महाप्रभु वल्लभाचार्य के दर्शन के प्रतिकार पर निबंध पढ़कर सुनाया था । उन्होंने महामहोपाध्याय पं. के. का. शास्त्री को बुलाकर उन्हें दिया और कहा था कि यह बिल्कुल मौलिक दृष्टि है इसे प्रकाशित किया जावे ।

पूज्य महाराजश्री से और भी अनेक विषयों पर खुलकर चर्चा तो नहीं हो पायी पर जो संपर्क आया उससे उनकी छाप अमिट रूप में पड़ी । समकालीन भारत में जो गोस्वामी और महंत कार्यरत है उनमें पूज्य प्रथमेश जी का स्थान महत्वपूर्ण है ।

आधुनिक युग के महाप्रभु

- श्री रामचन्द्र अग्रवाल, हरदा.

जीवों को शरण लेना, भक्ति मार्ग का प्रचार प्रसार करना, दीन दुखियों पर दया कर उद्धार करना, यह पूज्यपाद प्रथमेशजी का कर्तव्य रहा है । इसीलिए आपने आदिवासियों के लिए झाबुआ में स्कूल खुलवाया । दलितों को और शूद्रों को कंठीमाला देकर कृष्ण भक्ति का अधिकार देकर उनका उद्धार किया ।

संप्रदाय का प्रचार कर वैष्णवों को एक सूत्र में बाँधने के लिए पुष्टि मार्गीय वैष्णव परिषद् की शाखाओं की जगह-जगह स्थापना की । हिन्दुस्तान के अलावा विदेशों में भी शाखाएँ स्थापित कर अन्तर्राष्ट्रीय पुष्टिमार्गीय वैष्णव परिषद का प्रचार किया और लाखों लोगों को कृष्ण भक्ति का मार्ग दिखाया । इसी तारतम्य में दिसम्बर सन् 1981 में आप हरदा पधारे और हरदा में शाखा की स्थापना की और आज्ञा की कि शाम को सार्वजनिक सभा का आयोजन किया जाय । हम सभी बड़ी हैरत में पड़ गये अब क्या किया जाय क्योंकि जहाँ कभी आज तक ऐसा कोई कार्यक्रम नहीं हुआ था । पर आपश्री की आज्ञा मानकर बड़े मंदिर चौक में सभा का आयोजन रखा गया । शाम को समय पर पधारकर आपने कृष्ण भक्ति और श्री आचार्य चरण के सिद्धान्तों पर प्रकाश डाला । चौक में बड़ी संख्या में जनता एकत्रित हुई थी । आपके वचनामृत सारमुक्त प्रवचन से जनता मुग्ध हो गयी और उसी वक्त कई दैवी जीवों ने आपश्री से अष्टाक्षर मंत्र दीक्षा ग्रहण की जिसमें वकील और प्रोफेसर भी शामिल थे ।

आप वचन और आश्वासन के पक्के थे । उदाहरणतः एक बार मैं बंबई गया था तब आपश्री से जगदीश में सोमयज्ञ करने के लिए पधारेंगे तब सकरी आरोगवाने की अनुमति के लिए प्रार्थना की । आपकी मंजूरी के बाद सोमयज्ञ के समय जगदीश में सकरी

आरोगवाने के लिए गये तब आपको देर हो जाने के कारण सब वैष्णव को मना कर दिया। कमरे से सबको बाहर निकाल ही रहे थे, मैं ऊपर आपके सम्मुख पहुँचा और आपके दर्शन करे तथा दण्डवत थी तब आपकी दृष्टि मुझ पर पड़ी तथा गुस्सा न करते हुए मुझसे व अन्य से सकरी आरोगने का लाभ दिया ।

आपके दर्शन करने मात्र से ही बुद्धि एवं भक्ति मिलती है । यह चमत्कार आपने कई लोगों को दिया है । कई को जीवन दान दिया है कई को आशीर्वाद देकर उनका उद्धार किया है । यह इस कलिकाल की चमत्कारी अलौकिक प्रतिभा थी ।

महामहिम शाली आचार्य

(प्रा. उमाकान्त शुक्ल रघुनाथपुरा, धार (म.प्र.)

श्रीमद्वल्लभाचार्यवतंश वल्लभकुलभूषण आचार्य श्रीमद् रणछोड़रायजी 'प्रथमेश' प्रायः उज्जैन नगर आया करते थे । एक समय मैं उनके दर्शनार्थ सराफा बाजार स्थित श्री मदनमोहन लालजी की हवेली में गया । उनका भव्य व्यक्तित्व और उनकी सहज सरलता से मैं उसी दिवस से प्रभावित हुआ । इसके पूर्व भी मैं कई आचार्यों से मिला और न मैंने केवल उनके आशीर्वाद ही प्राप्त किये, अपितु निकटता भी स्थापित करने का सौभाग्य प्राप्त किया था ।

आचार्यश्री प्रथमेशजी महाराज में परम्परागत विद्वत्ता, संगीत की मर्मज्ञता, कर्मनिष्ठा और तेजस्विता के साथ-साथ सरलता और कुछ करने की लालसा की विशेषता थी । वे सदा इस विचार में रहते थे कि कौन व्यक्ति किस प्रकार से वल्लभसम्प्रदाय के लिये उपयोगी हो सकता है । वे सदा व्यक्ति को पहिचानकर उसे उसकी रूचि के अनुसार कार्य में संलग्न कर दिया करते थे । जब मैं उनसे पहिली बार मिला तो उन्होंने मुझसे प्रश्न किया कि क्या आप मंदिर में नियमित रूप से आते हैं ? मैं अवाक् रह गया और मैंने पूरा साहस बटोरकर कहा कि वर्ष में कम से कम एक बार अन्नकूट के दर्शन करने को तो अवश्य आता हूँ, इत्यादि ।

मैंने उनसे चर्चा के प्रसंग में निवेदन किया कि आचार्यश्री यदि आप यही चाहते हैं कि अधिकतर वल्लभकुली लोग मंदिर में नित्य दर्शनार्थ आते रहें, तो आपको विशेषकर नई पीढ़ी में ऐसे संस्कारों को स्थापित करवाने चाहिये कि वे मंदिरों में और उनमें होने वाले उत्सवों में सम्मिलित हुआ करें । इस प्रसंग में श्रीमदनमोहनलालजी के मंदिर में वल्लभ बालमंदिर की स्थापना पर विचार किया गया और आपने तत्काल इसकी स्वीकृति प्रदान करके मूर्तरूप में संस्कार केन्द्र प्रारम्भ करवाया। मेरे दो बालकों ने भी इसी बालमंदिर में शिक्षा-दीक्षा ग्रहण की यह घटना आचार्यश्री के त्वरित निर्णय और रचनात्मक ठोस कार्य करने की प्रवृत्ति का परिचायक है । केवल उज्जैन नगर में ही नहीं, अपितु अन्य स्थानों

पर भी बालमंदिर, वाचनालय, सम्प्रदाय की परीक्षाओं के केन्द्र, भजन-मंडली, औषधालय आदि अपने अधीनस्थ मंदिरों में स्थापित किये । इनके पूर्ववर्ती आचार्यों ने इतनी वड़ी संख्या में ऐसे जनोपयोगी कार्यों को मंदिरों से नहीं जोड़ा था ।

उज्जैन के बारहवर्षीय सिंहस्थ महाकुंभ 1980 में श्री वल्लभनगर स्थापित करवाने और उसमें सोमयज्ञ करने का एक अद्वितीय और सराहनीय कार्य आचार्यश्री प्रथमेशजी महाराज के अथक प्रयासों से ही सफल हुआ था । 1980 के पूर्व के सिंहस्थों में वल्लभकुल द्वारा सम्मिलित होकर इतने बड़े कार्य नहीं किये जाते रहे थे । वर्तमान 1992 सिंहस्थ में भी वल्लभनगर का यह क्रम चालू है ।

इस प्रसंग में मेरे पूज्य पिताजी पं. नाथू शंकरजी शुक्ल द्वारा निरुपित एक घटना का उल्लेख करना मैं अपना परम कर्तव्य समझता हूँ । घटना इस प्रकार से है - सिंहस्थ के मेलाक्षेत्र मंगलनाथ में मेला अधिकारी द्वारा निर्धारित भूखंड पर वल्लभनगर स्थापित करने की अनुमति मिलने पर कतिपय अन्य संप्रदाय और अखाड़ों के प्रमुखों द्वारा आपत्ति प्रकट की गई और उनके परम्परागत दिये जाने वाले स्थानों में हेरफेर होने से वे लोग रुष्ट हो गये । इस रोष की चरण परिणति वैशाली पूर्णिमा के शाहीस्नान के पदानुक्रम चलसमारोह के क्रमांक पर हुई । विघ्न संतोषी आचार्यों ने अथवा उनके कार्यप्रभारियों ने आचार्यश्री प्रथमेश जी महाराज तथा मेला अधिकारी महोदय को पत्र लिखा कि नियम और परम्परा के प्रतिकूल वल्लभकुल के गोस्वामी - बालकों, आचार्यों और भक्तों की शोभायात्रा अंकपात द्वार से पुलिस संरक्षण में कैसे निकलती है ? हम पाषाण वर्षा करेंगे । इस पत्र से समस्त मेलाक्षेत्र मंगलनाथ में और खासकर वल्लभनगर और अंकपात क्षेत्र में कल्पवास कर रहे श्रद्धालु वैष्णवों में, प्रशासन में और धर्मप्राण नगरवासियों में असंतोष व्याप्त हो गया ।

इस प्रसंग में आचार्यश्री प्रथमेशजी महाराज ने एक निजी पत्र समस्त पीठाधीश्वर आचार्यों को लिखकर भेजा कि आगामी वैशाखी पूर्णिमा के पावन पर्व पर परिभ्रमण करते हुए, पतित पावनी क्षिप्रा मैया के स्नान के लिये उद्यत, परिजनों सहित ठाकुरजी महाराज को लिये हुए, मार्ग में जाते समय परम वैष्णवजनों के पाषाण-प्रहार से अवंतिका की इस पावन भूमि पर मेरी मृत्यु होती है तो मैं अपने को कृतार्थ और धन्य समझूंगा । वताइये - इससे उत्तम और कौनसी मृत्यु हो सकती है ?

इस हृदयस्पर्शी पत्र को जब अन्य पीठाधीश्वर आचार्यों ने पढ़ा तो वे अत्यंत लज्जित हुए और सभी ने मेला अधिकारी के समक्ष आश्वासन दिया कि इस प्रकार की कोई अवांछनीय घटना नहीं घटेगी अपितु सबसे पहिले क्रम में वल्लभकुल की शोभायात्रा शाही स्नान हेतु मंगलनाथ क्षेत्र से नगरभ्रमण करती हुई मुख्यस्थल रामघाट की ओर प्रस्थान करेगी।

यह आचार्यश्री का ही व्यक्तित्व था कि वे इस त्रासदायी और अनहोनी घटना को सहसा और सरलता से विलोपित कर सके । मेला अधिकारी और पुलिस प्रशासन ने भी

इस सूझ-बूझ की अत्यंत मुक्तकंठ से प्रशंसा की ।

आचार्य प्रथमेशजी महाराज ने परम्परागत वल्लभ वैष्णवों में अपनी भूमिका को तो सम्यक् रुपेण प्रस्थापित ही नहीं किया, अपितु भारतीय धर्म प्राण जनता की एकमात्र संस्था 'विश्वहिन्दू परिषद्' की1965 में बंवई में स्थापना किये जाने में भी अपनी भूमिका को गौरवमयी वनाया । परिषद् में समस्त धर्माचार्यों को एकमंच पर लाने में आपका सहयोग सराहनीय था । आप वर्षों ही नहीं बल्कि संपूर्ण जीवन भर गौरक्षासमिति, धर्माचार्य समिति आदि कई विभिन्न समितियों के संरक्षक, मार्गदर्शक और प्रमुख बने रहे । विश्वहिन्दू परिषद् को मूर्तरूप देने में आपका योगदान अकथनीय है । आपने इस संस्था को अन्य आचार्यों को साथ में रखते हुए गति और स्वरूप प्रदान किया, जो कि विज्ञ पाठकों से अपरिचित नहीं है ।

अंत में मैं एक प्रसिद्ध सुभाषित को आचार्यश्री की स्मृति में प्रस्तुत करते हुए मेरे कुलोपास्य देव श्रीमदनमोहनलालजी की सेवा में यह लेख समर्पित करता हूँ ।

''धनिनोपि निरुन्मादा युवानोऽपि न चंचलः ।

प्रभवोष्य प्रमत्तास्ते महामहिमशालिनः ।।''

(धनवैभव संपन्न होते हुए भी जो प्रमादरहित हों, युवक होने पर भी चंचल नहीं हो, उच्चपदासीन होते हुए भी अप्रमत्त होकर सरल और सहज हों, वस वही महामहिम होता है ।)

क्रान्ति दर्शी आचार्य प्रथमेश

पं. द्वारका प्रसाद पाटोदिया

केन्द्रीय संगठन मंत्री,

अ.पु. वैष्णव परिषद्

श्री महाप्रभुजी के पंच शताब्दी उत्सव से 2 वर्ष पूर्व की बात है । जैन समाज के द्वारा भगवान् महावीर का 2500 वाँ निर्माण उत्सव मनाया जा रहा था और केन्द्र एवं राज्य शासन मुक्त हस्त से राज्य कोष उस उत्सव के लिये प्रदान कर रहे थे । पूज्यपाद ने मुझे आज्ञा दी । ''पाटोदियाजी ! क्या हम लोग भी इसी स्तर पर श्रीमहाप्रभुजी की पंच शताब्दी नहीं मना सकते ?'' मैंने निवेदन किया कि क्यों नहीं, हम अवश्य मना सकते हैं । लेकिन श्री महाप्रभुजी ने 500 वर्ष पूर्व इस देश व समाज के लिये जो कुछ किया, उसे पहले जनसाधारण के समक्ष रखना पड़ेगा । शासन का सहयोग भी मिल जावेगा ।

तदनुसार मैंने योजना बनाई । देशभर के मूर्धन्य 100 नागरिकों की एक राष्ट्रीय समिति प्रस्तावित की । महत्वाकांक्षी योजना बनी । राष्ट्रीय समिति का विधान वनाया

गया ।

मुझे स्मरण है कि वंबई के मोटा मंदिर के कुसुम सभा गृह में पूज्यपाद गोस्वामी वालकों की एक विस्तृत सभा हुई । सभा में कार्यवाही 2-3 घंटे तक चली । पूज्यपाद ने उस सभा में उपस्थित रहने के लिये मुझे भी निर्देश दिया । वह महत्वाकांक्षी योजना स्वीकार की गई । प्रस्तावित राष्ट्रीय समिति को स्वीकृत किया गया ।

प्रस्तावित राष्ट्रीय समिति में अधिकांश मेरे पूर्व परिचित थे, उनके पास जाने का मैंने विचार बनाया । लेकिन विधान के जो कागजात हस्ताक्षर लेने के लिये तैयार किये गये थे, वे किन्हीं की कृपा से गुम हो गये और उस राष्ट्रीय प्रयास को उसी समय छोड़ देना पड़ा ।

बाद में पंच शताव्दी समिति बनी लेकिन केवल पुष्टिमार्गीय वैष्णवों की ही । इस प्रकार पूज्यपाद का वह प्रयास, जिसमें अपने संपूर्ण समाज के मूर्धरूप नागरिकों के सहयोग से श्री महाप्रभुजी की पंचशताब्दी मनाने का महत्वाकांक्षी विचार बनाया था विफल हो गया।

पूज्यपाद का विचार पुष्टिमार्ग का सार्वभौम स्वरूप प्रकट करने का था ।

उदयपुर में श्रीनाथजी की हवेली में प्रातः मंगला के दर्शन के बाद आप के प्रवचन का कार्यक्रम था ।

पहले दिन सायंकाल तक उदयपुर पहुँच जाने की योजना थी लेकिन किन्हीं कारणों से कोटा से कार द्वारा प्रस्थान पहले दिन सायंकाल ही हो सका । मार्ग में चित्तौड़ गढ़ क्षेत्र के जंगल अलग आड़े आये । रात्रि में कोई मार्ग बताने वाला भी नहीं । फिर भी आप रात भर कार में प्रवास करते रहे ।

सुबह हम लोग परेशान व निराश थे कि क्या करें । इतने में आपकी कार दिखाई दी । मैंने निवेदन किया कि रात भर की थकान है, थोड़े विश्राम के बाद प्रवचन करें । लेकिन आपने कहा कि मैं तो सिपाही हूँ । पहले कर्त्तव्यपालन अर्थात् प्रवचन । विश्राम वाद में । फिर प्रवचन हुआ । सबके चेहरे खिल उठे ।

रुग्ण शैया पर भी देश की अखंडता की चिंता जब आप हृदय रोग से पीड़ित होकर कलकत्ता में रुग्ण शैया पर थे, तब मैं आपके दर्शन करने व आपसे निर्देश लेने कलकत्ता पहुँचा । कठिनाई से मुझे आपसे वार्तालाप करने का सौभाग्य मिला ।

आपकी कुशल क्षेम पूछने के लिये मैं कुछ निवेदन करुँ, इससे पहले तो आपने मुझसे प्रश्न कर लिया कि पंजाव समस्या का क्या होगा ।

मैं तो प्रश्न सुनकर डर गया क्योंकि ऐसे ज्वलन्त प्रवचन पर चर्चा से आपको चिन्ता होना स्वाभाविक था । मैं उत्तर को टाल गया और फिर अच्छी-अच्छी वातें निवेदन की और तनाव को कम किया ।

मैं हैरान था कि एक हम वैष्णव हैं जिनको देश, धर्म, समाज की कुछ पड़ी नहीं है और एक आप हैं जो रुग्ण शैया पर भी देश की अखण्डता की चिन्ता कर रहे हैं ।

फिर मेरे निवेदन पर आपने वैष्णवों के लिये एक संदेश लिखकर दिया, जो इस ग्रंथ में पृथक से प्रकाशित किया जा रहा है ।

पू. प्रथमेश जी का विश्व हिन्दू परिषद् के कार्य में अग्रणी योगदान

पं. द्वारका प्रसाद पाटोदिया

भूतपूर्व केन्द्रीय संगठन मंत्री

विश्व हिन्दू परिषद्.

पूज्यपाद आचार्य जी महाराज पुष्टि-सृष्टि के तो आचार्य हैं ही सनातन हिन्दू धर्म के क्षेत्र में भी वे अत्यन्त प्रभावी आचार्य माने जाते हैं ।

सन् 1963-64 में विश्व हिन्दू परिषद् की स्थापना का विचार राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के सरसंघ चालक पू. गुरुजी गोलवलकरजी के समक्ष जब आया और हिन्दू धर्म के जिन 4-5 प्रमुख धर्माचार्यों की बैठक उन्होंने नागपुर में बुलाई तब उसमें पू. प्रथमेश जी महाराज भी पधारे थे और वि.हि.प. के विचार को अपना समर्थन प्रदान किया था ।

सन् 1970 में वि.हि.प. का कोटा (राजस्थान) में हाड़ौती अंचल का अधिवेशन हुआ और पू.प्रथमेशजी ने उस अधिवेशन में अग्रणी भाग लिया ।

ब्यावर क्षेत्र में चौहान राजपूतों के धर्म जागरण कार्यक्रम में, विशेषकर के उनको स्वधर्म में स्थिर करने के कार्य में, पूज्यपाद ने भाग लेकर सबको सामाजिक प्रेरणा प्रदान की ।

जव दिल्ली में विज्ञान भवन में धर्म संसद का अधिवेशन था, तब भी आप वहाँ पधारे तथा एक अधिवेशन की अध्यक्षता भी की ।

वि.हि.प. के केन्द्रीय मार्ग दर्शक मंडल के तो आप प्रारंभ से ही सम्मानित सदस्य रहे हैं ।

जव पिछड़े जिलों में जागृति व सेवा कार्य के लिये उन जिलों की धर्माचार्यों द्वारा दत्तक लिये जाने की योजना वि.हि.प. ने बनाई तो आपने वनवासी बहुत झाबुआ जिला को दत्तक लेकर अन्य धर्माचार्यों के समक्ष अग्रणी उदाहरण प्रस्तुत किया । गत प्रयाग पूर्ण कुंभ के अवसर पर श्री राम जन्म भूमि मुक्ति यज्ञ में भी आपने सोत्साह भाग लिया।

स्वर्ण जयन्ती सभागृह का शिलान्यास

12 दिसंबर 1982

कर्नाटक राज्य के मैंगलोर जिले में एक तीर्थ स्थान है - धर्म स्थल । वहाँ की व्यवस्था विचित्र किन्तु प्रेरक है ।

वहाँ के सेव्य शंकर जी है लेकिन पुजारी वैष्णव है, और मंदिर के व्यवस्थापक (परंपरागत अधिष्ठाता) जैन परिवार है जिनका नाम है वीरेन्द्र हेगड़े । वे मेरे परिचित हैं। इस तीर्थ स्थल पर स्वर्ण जयन्ती उत्सव मनाया गया और उसकी स्मृति रूप में एक स्वर्ण जयन्ती सभागृह का शिलान्यास भी किया जाना था ।

श्री हेगड़े ने वैष्णवाचार्य के नाते पू. आचार्य प्रथमेशजी से निवेदन किया और पू.आचार्य जी इस शिलान्यास के निमित घुर दक्षिण में पधारे । सचिव प्रधान के नाते मैं आपके साथ था ।

(प्रेषक - पं. द्वारकाप्रसाद पाटोदिया किशनगढ़)

कार्यकर्ताओं के संरक्षक

- प्रा. रेखा सिंघल, धार

बंबई के कार्यकारिणी की बैठक थी। मैं बाबूजी (गजाननजी शर्मा) के साथ गयी थी। बैठक के वाद मैं बाजार में वहीं भूलेश्वर में गयी हुई थी । बाबूजी पूज्य प्रथमेशजी के पास लालमणि गये हुए थे । चर्चा के दौरान महाराजश्री ने बाबूजी से कहा "आप रेखा को परिषद् के कार्य में अधिक जोड़िये। वह अच्छा कार्य कर सकती है ।" बाबूजी ने महाराजश्री को साधारण रूप से कह दिया "आजकल वह बहुत नर्वश रहती है। किसी कार्य में उसकी रुचि नहीं रही ।" महाराज श्री ने कहा "कहाँ है वह उसे बुलाओ" तब वाबूजी ने कह दिया कि वह तो बाजार गयी है किन्तु महाराजश्री ने उस बात को छोड़ा नहीं । उन्होंने मनुभाई आगर वालो को बाजार में मुझे बुलाने भेज दिया तथा बाबूजी को तो पता भी नहीं लगने दिया कि मुझे बाजार से बुलाया है। मैं बाजार में "लालमणि" के सामने खड़ी थी कि मनुभाई ने आकर कहा "महाराजश्री बुला रहे हैं जल्दी चलो" । मैं घबरा गयी कि महाराजश्री मुझे जल्दी से क्यों बुला रहे हैं । कहीं बाजार आने के कारण तो मुझे डाँट नहीं पड़ेगी । पर क्या करती, लालमणि भवन गयी । उस समय संध्या आरती का समय हो गया था। महाराजश्री ऊपर से नीचे आरती करने पधार रहे थे। मैं आचार्यश्री को आता देख और कहीं रास्ता नहीं होने से दाऊजी के मंदिर के द्वार के पांस एक तरफ सकुचाकर खड़ी हो गयी । महाराजश्री ने वहीं दूर से मंदिर में प्रवेश के पूर्व ही मुझसे कहा - "क्यों क्या बात है कुछ सुस्त और नर्वश दिख रही हो, ऊपर चलो तुमसे कुछ वात करना है ।" मैंने ऊपर पहुँचकर आपश्री के पूछने पर कहा - " स्वास्थ्य ठीक नहीं रहता, इसलिए कुछ अच्छा नहीं लगता ।" आपश्री ने कहा - "हम दवा देंगे, सब ठीक हो जायेगा । परिषद् का कार्य करो ।"

उसके वाद आपश्री ने कार निकलवायी घूमने जाने के लिए । किन्तु अत्यधिक संकोच या डर के कारण मैंने वावूजी से इशारे से कहा मैं कहाँ चलूँगी । मैं नहीं चलती।

आप जाइये, मैं यही रहती हूँ किन्तु मेरे इशारे को और संकोच दोनों को ही महाराजश्री ने समझ लिया । स्वयं ने ही कहा चलो-चलो घूमने चलना है । आपश्री कार में आगे की सीट पर विरजे। उन्होंने मुझे स्वयं के पास बैठने की आज्ञा की । मैं बहुत संकोच में थी - क्या बात करूँगी, कैसे बैठूँगी। इन विचारों से बहुत घबरा रही थी । मैंने अपने संकोच एवं घबराहट को छिपा लेने के लिए महाराजश्री का नेपकिन, एक सूंघने की डिबिया, मनहरभाई श्राफ से ले ली। इन वस्तुओं के लेते ही महाराजश्री ने मुझसे कहा ये सामान आपने ले तो लिया अब हमें जब जरुरत होगी तुम्हें ही देना पड़ेगा । जरूरत के मुताबिक ही देना आपकी जिम्मेदारी रहेगी । मागेंगे नहीं । मेरे मन में अब फिर बैचेनी होने लगी कि इनकी आवश्यकता होगी, कब देना है कब नहीं ? किन्तु आपश्री की आवश्यकतानुसार यथासमय मैं सभी वस्तुएँ दे सकी । इस जिम्मेदारी के सफल निर्वाह से मैं मन ही मन बहुत आनन्दित थी तथा महाराजश्री भी मेरे कार्य से प्रसन्न हुए ।

कार से हम समुद्रतट पर पहुँचे । वहाँ पहुँचकर आपश्री ने कहा "इतना लम्बा एरिया है इसके तीन राऊंड होंगे । पैदल चल सकती हो? मैंने हाँ कह दिया और तीव्र गति से घूमना प्रारंभ हो गया । घूमते हुए आपश्री ने परिषद् की गतिविधि, उसके प्रति समर्पण तथा जीवन के विविध उदाहरण तथा प्रश्नोत्तर के द्वारा किसी भी कार्य के प्रति लगन होने की अच्छी समझाइश तो दी ही, साथ ही आपश्री इन छोटे-छोटे प्रसंगों से मेरी मनःस्थिति का विश्लेषण कर रहे थे । आपश्री ने सभी गंभीर विषयों को बहुत सरलता व कहानी की तरह रोचक ढंग से प्रस्तुत करते हुए गंभीर चिन्तंन एवं दो घन्टे की पैदल यात्रा को बहुत सरल एवं सहज बना दिया । वह प्रसंग मेरे मानस पटल पर आज भी उसी तरह स्मरण हो जाता है ।

इस तरह महाराजश्री छोटे से छोटे व्यक्ति चाहे वह बच्चा हो या महिला ही क्यों न हो उसकी मानसिकता को समझने व उन्हें जीवन के दृष्टिकोण को समझाने का पूरा प्रयास करते थे । छोटे से छोटे कार्यकर्ता की निराशा भी उन्हें बैचेन कर देती थी । इतना ही नहीं बल्कि उसकी निराशा को आशा या उसे आशावान बना देने के लिए हर तरह के प्रयास से सदैव तत्पर रहते थे । यह आपश्री के महान व्यक्तित्व एवं परिषद् के लिए छोटे से छोटे कार्यकर्ता को भी सहयोगी बनने बनाने की प्रेरणा देना ही मुख्य है । महाराज श्री परिषद् में महिला जागृति की महती आवश्यकता स्वीकार करते थे ।

हर कार्य भगवत्सेवा

- प्रा. रेखा सिंघल, धार.

कांकरोली में सन् 1984 में मई 22, 23, 24 को अन्तर्राष्ट्रीय पुष्टिमार्गीय वैष्णव परिषद् का छप्पन भोग के अवसर पर प्रचाराधिवेशन था । मैं बाबूजी (डॉ. गजाननजी शर्मा) के

साथ गयी थी । प्रचाराधिवेशन में पूज्यपाद गो.प्रथमेश जी महाराज अध्यक्षता कर रहे थे। वाबूजी पुष्टिमार्गीय साहित्य के प्रकाशन पर बोल रहे थे तभी पूज्य प्रथमेश जी ने संकेत से मुझे बुलाया । मैं डरती हुई भाषण और असंख्य जनता के बीच महाराज श्री के पास पहुँची उन्होंने कहा - 'पुष्टिमार्ग' और 'वल्लभाचार्य' पुस्तकें जल्दी से लाना। मैं पुस्तक स्टॉल से दोनों पुस्तकें शीघ्र लेकर पहुंची । आपश्री ने शीघ्रता से दोनों पुस्तकें लेकर भाषण से संबंधित साहित्य प्रकाशन की बात को पुष्टि देते हुए खड़े हुए तथा स्वयं ने उन दोनों पुस्तकों को वैष्णवों को न केवल दिखाया अपितु उन्हें खरीदनें व पढ़ने की प्रेरणा भी दी। उसके पश्चात् तो इन पुस्तकों को खरीदने की जैसे बाढ़ ही आ गयी । तब महाराजश्री ने उस बाढ़ का रुख दूसरी तरफ मोड़ देने के लिए ताकि धर्म सभा (प्रचाराधिवेशन) में व्यवधान नहीं हो मुझसे कहा जाओ इसे दरवाजे पर लेकर खड़े हो जाना। आपश्री की आज्ञानुसार मैं, पाटोदियाजी तथा मेरे बाबूजी सभी दरवाजे पर खड़े होकर इन पुस्तकों का प्रचार करने लगे । उसी समय महाराजश्री उधर से पधार रहे थे तो स्वयं आपश्री भी खड़े होकर साहित्य का प्रचार करने लगे । यह उनकी सहज निष्ठा थी । परिषद् के मंच पर जब जो बात कही जाती उसे वैष्णवों के हृदय में उतारना वे जानते थे। उसके लिए वे स्वयं भी प्रचारक बन जाते थे । तथा आपश्री जनोपयोगी छोटे सरल साहित्य प्रकाशन को वहुत महत्व देते थे । इसलिए वे उन साहित्य प्रकाशन को बहुत महत्व देते थे । इसलिए वे उन साहित्य का अधिकाधिक प्रचार करवाते ही नहीं बल्कि अवसर होने पर स्वयं भी वैष्णवों की भरी भीड़ में खड़े होकर स्वयं प्रचार करने लगते थे । उनके लिए हर कार्य भगवत्सेवा था ।

श्रीवल्लभ का नाम सूर्य के समान चमके

आज तो स्वधर्म की रक्षा करने की जरूरत है. यह समय निश्चित हेकर बैठने का नहीं. सावधान रहकर सम्प्रदाय का उन्नत करने का है, सम्प्रदाय की उन्नति के कार्यों की उपेक्षा न करें, भवन्नाम लें और भगवद् आश्रय रखें इसके साथ ही निरभिमान होकर परिषद् की सेवा करें. हमने स्वधर्म को अपना सर्वस्व सौंपा है फिर स्वधर्म और संस्था से भिन्न कोई बात नहीं है, मुझे तो तभी चैन पड़ेगी जब हमारा संगठन, श्रीवल्लभ का नाम फिर सूर्य के समान चमकाएगा.

— प्रथमेश

पूज्यपाद श्री प्रथमेश जी के प्रति सादर सप्रेम समर्पित -

पूज्यपाद का प्रवचन

अखिल भारतीय कार्यकर्त्ता प्रशिक्षण शिविर, द्वारका

११ मई १९८९ ई.

वैष्णव परिषद -- संगठन का यह प्रशस्त पथ है । इसे उजड़ने न दें । संगठन कार्य में बाधायें बहुत आवेंगी । अपने हाथों व पलकों से हमें उन बाधाओं को हटाना है।

मैं देखता हूँ कि हममें से कई ने द्वैत की भावना से पीड़ित होकर स्वयं के जीवन को दूभर बना दिया है । द्वैत की भावना निकाल दीजिये ।

भगवद् कामो यजेत् । हमने कर्म को ब्रहम माना है । समाजऽस्तु स्वधर्मिणः । हमने सिद्धाई पर ठोकर लगाने वाले लोग पैदा किये । तो फिर आज क्या हो गया । कितनी ऊँची भावना हमारी थी जब हमने कहा --

आये मेरे नंद नंदन के प्यारे ।

हमारा हृदय भगवद् धाम बने ।

हमारा जीवन भगवद् धाम बने ।

हमारा घर भगवद् धाम बने ।

हमारा संसार भगवद् धाम बने ।

बड़ी संस्था में कार्यकर्त्ताओं को आगे आने दें । हम लोग अपने बिखराव को रोकें। हमें केन्द्र से राज्यों में कार्यकर्त्तागण भेजने चाहिये, तभी संगठन कार्य बढ़ेगा ।

कोई शायद यह सोच रहे हों कि हम तो अब थक गये । लेकिन सेवोपयोगी देह कभी नहीं थकती । कृपया विचार करें ।

प्रेषक -- पं. द्वारका प्रसाद पाटोदिया
किशनगढ़

पुष्टिमार्ग के प्रकाश स्तंभ

-- श्री भगवानदास माहेश्वरी, भोपाल

जगद्‌गुरु श्रीमद् वल्लभाचार्य ने जो पुष्टिमार्ग प्रकट किया उसे उनके वंशज बराबर चलाते आ रहे हैं । वर्तमान समय के प्रवाह की गति को समझे बगैर चलने के कारण हमारा सम्प्रदाय पिछड़ रहा था । स्थितियों के अनुरूप न चलने के कारण हमारे सम्प्रदाय में ठहराव की स्थिति और ह्रास के लक्षण दिखने लगे थे । ऐसे समय में सम्प्रदाय का वास्तविक मर्म समझाने वाले, उसे सही दिशा देने वाले, दृढ़ निश्चयी महान व्यक्तित्व का प्रादुर्भाव हुआ, जिन्हें हम श्री प्रथमेश के नाम से जानते हैं । उन्होंने हमें मूल तत्त्व और सही दिशा की चलने की प्रेरणा दी और ह्रास के गति रोकने का साहस बरा कदम उठाया ।

श्री प्रथमेशजी के कार्यक्षेत्र में प्रवेश के पूर्व भी वैष्णव परिषद् कार्यरत थी किन्तु आपके नेतृत्व में उसे नव चेतना मिली वह क्रमशः अखिल भारतीय और अंतर्राष्ट्रीय रूप धारण सकी । यह आपकी दूरदृष्टि का ही सुपरिणाम था । आपने वैष्णव परिषद् के पदों पर वैष्णवों को और आचार्य परिषद् के पदों पर आचार्यों को आसीन रखने की नीति बनायी। आचार्य परिषद् धार्मिक और साम्प्रदायिक क्षेत्र में वैष्णव परिषद् का मार्गदर्शन करे और वैष्णव परिषद् संगठन का कार्य करें ।

पूज्य श्री प्रथमेशजी का स्पष्ट मत था कि अब समय आ गया है, जब कि वैष्णव स्वयं संगठित होकर सम्प्रदाय को जीवित रखें, आज हमें दूसरों से नहीं, वरन् अपनों से ही खतरा है । हमारी संकीर्णता हमें धर्मच्युत कर रही है, हम डूब रहे हैं । हमारी संकीर्णता ने हमें सीमित कर दिया । यदि हमने समय पर ताज बीवी के वंशजों को अपनाया होता तो आज भारत की साम्प्रदायिक स्थिति कुछ और ही होती ।

आपका कथन था कि हमारे सम्प्रदाय का भौतिक स्वरूप अति श्रेष्ठ है । उसके सामने कार्ल मार्क्स का साम्यवाद भी वौना दिखता है । प्रसादी लेने का नियम है कि पहले

वैष्णवों को प्रसादी दिलाई जावे बाद में स्वयं प्रसाद लेवें । इस व्यवस्था में यह तथ्य है कि हमारे आसपास रहने वाला कोई भी व्यक्ति भूखा न रहें । ठाकुरजी की सेवा के सम्बन्ध में भी वही साम्यवादी दर्शन महाप्रभुजी के सेवक सेठ पुरुषोत्तम दास बहु धनाढ्य थे किन्तु आपने ठाकुरजी को मोर-मुकुट और गुंजामाला का ही शृंगार धराया । इसके मूल में यही भाव था कि हमारा ठाकुर गरीब से गरीब वैष्णव द्वारा भी श्रद्धा-भक्ति से पूजा जा सके। सोने, हीरे, मोती के शृंगार तो सम्पन्न वैष्णव ही धरा सकते हैं अतः ठाकुरजी का शृंगार ऐसा हो जो जनसाधारण को उपलब्ध हो सके ।

आप श्री के प्रथम दर्शन मुझे सन् १९७५ में भोपाल में श्रीमद्‌भागवत के आयोजन के समय हुए । उसी समय आपने भोपाल में वैष्णव परिषद् की शाखा भी स्थापित की लेकिन उस समय में आपश्री के संपर्क में नहीं आ पाया । दूसरी बार आपश्री पिपरिया पधारते समय एरोड्रम से सीधे मेरे प्रेस में पधारे तब आपश्री से चर्चा का काफी समय मिला। उन दिनों नाथद्वारा में हरिजन प्रवेश की चर्चा बहुत तीव्र थी । इस संदर्भ में आपका स्पष्ट मत था कि यह राजनैतिक समस्या है । हमारे यहाँ शूद्र त्याज्य नहीं है । हमारे सम्प्रदाय में सभी वर्ग - वर्ण के वैष्णव हैं । हमने तो मुसलमानों को भी अपनाया है फिर हिन्दू धर्म के एक वर्ग का त्याग कैसा ? आपकी कथनी-करनी में अंतर नहीं था, तभी तो आपने भौरी में ४७ हरिजन परिवारों को दीक्षित किया । आप कहा करते थे कि यह कैसी विडम्बना है कि जो त्याज्य हैं, उनके साथ तो बैठकर हम खाते हैं और जो हमारे अपने हैं उन्हें हम त्याग रहे हैं ।

आपश्री ऊपर से जितने कठोर दिखते थे उतने ही आपश्री सहृदय थे । भोपाल अधिवेशन के समय के आप की सहृदयता के दो प्रसंग उल्लेखनीय हैं ।

भोपाल अधिवेशन के दौरान इटारसी के एक भावुक वैष्णव श्री रघुनाथदासजी सुरंजन ने आपश्री से इटारसी पधारने का अनुरोध किया । भोपाल शाखा के अध्यक्ष श्री व्रजमोहनदासजी का आग्रह था कि आपश्री के इटारसी पधारने से अधिवेशन का तारतम्य बिगड़ेगा अतः आपश्री इटारसी न पधारे । तब आपश्री ने कहा -- "आप लोंगों को समझा लूँगा, डाँट भी लूँगा पर आप पर कोई असर नहीं पड़ेगा किन्तु रघुनाथजी इतने भावुक हैं कि इन्हें मना करने की मेरी हिम्मत नहीं है । आपश्री इटारसी पधारे और भावुकता का सम्मान किया ।

इसी प्रकार एक वैष्णव बहन आपश्री की पधारवनी अपने घर कराना चाहती थी। जिन लोगों के माध्यम से उसने विनती करवाना चाही उन्होंने आपश्री की अस्वस्थता के कारण टाल दिया । अन्तिम दिवस मैंने उस महिला को काफी उदास देख कर उदासी का कारण पूछा तो उसने सारी स्थिति बताई । तब मैंने आपश्री को बतलाया कि उसके स्वसुर वैष्णव नहीं है इसी कारण वह बहन अपने गुरुजी श्री पुरुषोत्तमलालजी महाराज श्री को भी अपने घर नहीं पधरा सकी थी किन्तु आपश्री के प्रवचन सुनकर वे काफी प्रभावित हुए

हैं और उन्होंने स्वयं आपश्री को पधारने का आग्रह किया है अतः आपश्री का पधारना जरूरी है । आपश्री कृपापूर्वक वहाँ पधारे ।

उदयपुर अधिवेशन के समय आपश्री किन्हीं वैष्णव के घर विराज रहे थे । प्रातः विशाल कोठी की व्यवस्था में हम लोगों को दर्शन लाभ नहीं मिला । अधिवेशन स्थल पर आपश्री ने डाँटा कि रात के आये हुए हो फिर अभी तक क्यों नहीं मिले ? तब मैंने विनती की कि आपश्री भी सार्वजनिक स्थल पर विराजें तो सर्व साधारण वैष्णव को दर्शन लाभ हो जाता है । विशिष्ट व्यक्तियों के भवनों पर सर्वसाधारण वैष्णव को जाने में संकोच होता है । उस समय तो आप शान्त रहे किन्तु कुछ दिनों बाद आप मधुसूदन गढ़ जाने के लिए भोपाल पधारे तब केवल दो घंटे का भोपाल में विश्राम था आपने कहा कि परिषद् कार्यालय चलिए वहीं प्रवचन करके मधुसूदन गढ़ रवाना हो जाऊँगा । इस प्रकार आपने मेरे पूर्व निवेदन को ध्यान में रख कर सर्वसुलभ स्थान पर विराजने की कृपा की ।

आपश्री के लीला में पधारने के बाद जो स्थिति है, वह सोचनीय है । आपश्री में जो असाधारण दृढ़ता थी कठिन परिस्थितियों का सामना करने की असीम शक्ति थी, संगठन के प्रति जो अगाध समर्पण भाव और अमोध क्षमता थी, उसका अभाव आज सभी को खटकता है । इस अभाव के पूर्ति तो सर्वशक्तिमान् ही कर सकते हैं ।

कार्यकर्ताओं के प्रेरणा स्रोत

-- श्री चीमन भाई शेठ, बड़ौदा

वर्तमान समय में पुष्टिमार्ग के श्रीमद् वल्लभाचार्य जी के वंशज आचार्य परम्परा में नित्य-लीलास्थ प्रथम पीठाधिश्वर गोस्वामी श्री प्रथमेश जी महाराज महान विद्वान् और उत्तम वक्ता थे और वैष्णव समाज के संगठन के लिये तन-मन-धन द्वारा अपना सर्वस्व समर्पित करने वाले महान् आचार्य हो गये ।

अखिल भारतीय पुष्टिमार्गीय वैष्णव परिषद् का अंतर्राष्ट्रीय स्वरूप देने वाले भी आप ही थे । वैष्णव समाज और साम्प्रदायिक वैष्णव संस्थाओं के प्रमुख भी वैष्णव ही होना चाहिये ऐसा आप आग्रह करते थे तथा आचार्य वर्य ऐसी संस्थाओं के मार्ग दर्शक के रूप में रहे । ऐसी व्यवस्था के विचारक महाराजश्री दीर्घ दृष्टा थे ऐसे महान आचार्य श्री के सम्पर्क में आने वाले अभी के लिये महाराज श्री प्रेरणा स्रोत थे ।

महाराजश्री कार्यकर्त्ताओं का भी पूरा ध्यान रखते थे । वैष्णव कार्य कर्त्ता के घर जाकर खबर पूछने वाले ऐसे कितने आचार्य होंगे ?

मैं कपडवंज की कॉलेज में प्राध्यापक था । परिषद् के कार्य में क्रमशः सहभागी हुआ । प्रथमेशजी श्री नाथ जी जा रहे थे आप को पता चला कि यहाँ कपड़वंज में चीमन भाई रहते हैं तो अपनी गाड़ी रुकवा कर मुझे बुलवाया । मुझे बड़ा आनन्द हुआ । मैंने

आपश्री को प्रणाम किया । आपश्री ने आज्ञा की कि चीमन भाई मेरे आना श्री नाथ जी चलो । और मैं कुछ ही समय में तैयार होकर आपके साथ गाड़ी में बैठ गया ।

प्रवास में महाराजश्री के सौजन्य और सौहार्द्र का सुन्दर अनुभव हुआ उसे मैं कभी नहीं भूल सकूँगा । उसके बाद समय-समय पर परिषद् के कार्यक्रमों में मुझे बुलाकर परिषद् भी गतिविधियों से परिचित कराया । वर्तमान परिस्थितियों में कार्य भरो भी ऐसा ध्यान रखने वाले बहुत कम मिलते हैं ।

गोस्वामी आचार्य द्वारा परिषद् के कार्यकर्त्ता का आमसभा में अपमान की घटना का एक पत्र प्रथमेशजी महाराज को भेजा था । उसके उत्तर में आपश्री ने लिखा कि आचार्यों के रोष को भी हमें आशीर्वाद मानकर चलना है । और सेवा कार्य करना है । यह विनम्रता महाराजश्री की देखकर आदर से मेरा सिर आपके चरणों में झुक गया ।

जूनागढ़ विस्तार में पूर पीड़ित सेवा कार्य को और अकाल के अवसर पर गौसेवा के कार्य में आपश्री का सहयोग तथा प्रेरणा प्राप्त होती रही । वैष्णव समाज में जागृति के लिये सौराष्ट्र के धोराजी तथा थानगढ़ क्षेत्र में श्री वल्लभाश्रय की स्थापना करायी । राजकोट से श्री वल्लभसुधा मासिक पत्र का प्रकाशन शुरु कराया । किलरवा में श्री वल्लभाचार्य बालमन्दिर तथा पाठशाला का परिषद् द्वारा निर्माण हुआ इन सब कार्यो के लिये अविरत आपश्री की प्रेरणा ही काम करती रही है । ऐसे महान आचार्य श्री कभी वैध्यान से कोई क्षति हो जाय तो उसे स्वीकारने को तत्पर रहते थे । द्वारका कार्यकर्ता शिविर के समय रात्रि को मिटींग थी कुछ कार्यवाही हुई । उस पर विचार करने के पश्चात् प्रातः होते ही आपश्री मेरे निवास स्थान पर पधारे मैं तो स्नान करके तोलिया लपेट के खड़ा था वहाँ आपश्री ने कहा कल रात के निर्णय में भूल हो गई है, किन्तु चिन्ता मत करना हम सम्भाल लेंगे । ऐसी आपश्री में महानता थी ।

यादों के झरोखे से

श्री नारायण जी शास्त्री, कोटा

गोस्वामी रणछोड़ाचार्यजी ''प्रथमेश'' सबके अपने थे । सभी से यही सुनते हैं कि महाराजश्री की मुझ पर अतीत कृपा थी । मैं भी उसका अपवाद नहीं हूँ । मुझ पर भी अतिशय अनुग्रह रहा था गुरुवर का । बात तब की है जब मैं कक्षा दो मैं पढ़ता था । मेरे पिताश्री स्व. पं. मदनगोपालजी शास्त्री मुझे नाम दीक्षा दीवाने ले गये थे । उस समय आपश्री की वय बारह-तेरह वर्ष की रही होगी । लम्बाई की ओर अग्रसर होता इकहरा कमनीय मनोहर तन आस्कन्ध अवलंबित केश सभी को आकर्षित करते कमल नयन वे कुछ दौड़ते से निष मन्दिर की ओर पधार रहे थे । पिताश्री को देखकर पूछने लगे ''कहिये शास्त्रीजी आजकल गादीजी पर पाठ करने नहीं आ रहे हैं ?'' उन्होंने कुछ कहा, फिर निवेदन किया ''बाबाश्री बालक को आपकी शरण में ले आया हूँ ।'' ''मुझे धुंधला सा

याद है आपश्री ने आज्ञा की थी, ''हाँ हाँ, लाइये, हम तो इसके लिये ही हैं ।'' वहीं से आपने उच्च स्वर में कहा --''खवासजी, कण्ठी'' । मेरी ओर स्मित करते हुए आपने अष्टाक्षर मन्त्र की दीक्षा दी ।

कुछ दिनों बाद पिताश्री ने घर पर आकर हँसते हुए माताजी से कहा था ''आज तो बड़ी बात हुई । लाल बाबा ने पेटी हारमोनियम को खोलकर उसमें गुलाब के पुष्प भर दिये कहने लगे, अब इसमें से सुगन्धित स्वर निकलेंगे । आज सोचता हूँ तो लगता है कि स्वरों के साथ सौरभ का समन्वय । यह प्रभु-सुख के विचार से सर्वोत्कृष्ट दर्शन है, भक्ति-भाव है ।

दीर्घ अन्तराल पश्चात् आपश्री सुन्दर धर्मशाला के पास एक विशाल भवन में पधारे थे । दो बड़े हाल, बीच में दीर्घिका, वहाँ आपश्री गादी-तकियान पे विराजमान । कोटा के परम भगवदीयौओं से अर्द्ध वर्तुलाकार घिरे हुए, विद्वत् मण्डली से गंभीर शास्त्र-चर्चा में आनन्द रस पान करते थे, प्रफुल्ल नयन कमलों द्वारा भक्तों के हृदय भ्रमरों को भक्ति का मकरन्द रस पान कराते हुये, धीर गम्भीर कण्ठ से 'निराकार' शब्द की व्याख्या कर रहे थे । आपश्री आज्ञा कर रहे थे कि जिसका कोई भी रूप न हो , यह अर्थ नहीं लगता। 'निर' उपसर्ग तो बाहर निकलने के अर्थ में प्रयुक्त होता है । जिससे सब आकार बाहर निकले हों, आकारों की उत्पत्ति हुई हो, उसे निराकार कहते हैं । इस चर्चा में मैं भी सम्मिलित हो गया था । उस समय मैं कालेज का छात्र था । स्नातक परीक्षा पास करके निकला था । दो की वार्ता में बलात् कूद पड़ा अन्य सज्जन को तो कुछ बुरा लगा होगा, परन्तु गुरुदेव ने अब मुझे ही आलम्बन वनाकर वार्ता का प्रवाह गतिशील रखा । अन्ततः महाराज श्री ने आज्ञा की ''पण्डितजी हम आप के पुत्र को बम्बई ले जाएंगे । ये फर्रेवाजी अच्छी कर लेंगे'' ।

सन् ६६-६७ के मध्य महाराजश्री प्रथमेशजी के संरक्षण में वम्बई रहा । आपश्री ने आज्ञा की कि वावा सा. को संस्कृत व्याकरण पढाइये । आज्ञा-पालन हेतु मैं सबसे ऊपर वाले माले में, जहाँ बावाश्री लालमणिजी विराजमान थे, पहुँचा । वहाँ उस समय एक सक्सेना वाबू बावाश्री को अंग्रेजी भाषा का अध्ययन कराया करते थे । मैं तो ऊपर जाकर वावाश्री के कृपा रंग में रंग गया ।

संध्या को अथवा प्रातः किसी भी एक समय श्री गुरुदेव साग गली में स्थित निजी औषधालय में पधारते । रोगियों के कष्ट साध्य रोगों का निदान करते । कई बार स्वयं सूची-भेद (इंजेक्शन) करते । रोगी का आधा रोग तो आपश्री के स्पर्श व कृपामय वाणी सेही निवृत हो जाता था । सवसे नीचे के वड़े हाल में आपश्री के वचनामृत होते थे । कई वार मुझे भी अवसर देकर उत्साह वर्धन करते । अनेक भाषा-भाषी लोग आपश्री की शिष्य परम्परा में से थे । आपश्री उनसे उन्हीं की भाषा में सहज भाव से वातें करते थे।

कई वार रात्रि को संगीत गोष्ठियाँ सजती । वम्बई के जाने-माने कलाकार आते ।

महाराजश्री स्वयं यथावसर विभिन्न वाद्य बजाते । सब मन्त्रमुग्ध होकर उन परलोक से आने वाले संगीत स्वरों में डूबते-उतराते रहते । एक बार आपश्री ने मृदंग पकड़ी तो पकड़ी ही पकड़ी । घंटों विविध तालों में मृदंग धन-धनाती रहती । मृदंग-वादन बन्द करने के बाद भी पाँच-सात मिनिट तक तो ऐसा लगा कि अब भी मृदंग बज ही रही है । लोगों के मुखों से स्तुति वाचक शब्द (वाह-वाह, धन्य-धन्य) भी वाद्य विराम पर तुरन्त नहीं निकल पाये । सभी चित्र लिखे से थे । कभी जब प्रातः सीढ़ियों वाले मार्ग पर थे स्वर --- "पान धरनी सेवा, फूल धरनी सेवा "गूंजा करते और मैं दाऊजी के मन्दिर के जगमोहन के श्रीमद्‌भागवत का पाठ किया करता, अपने एकान्त में मानकर गोपी-गीत तथा वेद स्तुति कुछ झूम-झूम पढ़ता तो महाराजश्री सामने मन्द स्थित उगनन से आ खड़े होते । मेरा ध्यान जाता और मैं सकुचा जाता । आपश्री आज्ञा करते -- "महाराज । वह बात नहीं आ सकती, आपके पिताजी चौबीस घंटे में एक आसन पर पूरा पाठ करते थे" । वह उत्प्रेरण अब कहाँ ?

एक बार दुर्भाग्य ने मेरी कलाई आ पकड़ी । मैं कोटा आने का विचार करने लगा। मोह प्रवल हो उठा । मैंने निवेदन किया "जय" "हाँ बोलो" मैं बड़ी कठिनाई से कह पाया था कि मैं कोटा जाने की आज्ञा चाहता हूँ । "क्यों ऽ ऽ ऽ ऽ ?" अब इस 'क्यों' का क्या उत्तर था ? फिर भी कुछ तो कहना ही था । मैंने विनती की "बम्बई बहुत बड़ी है, घबरा गया हूँ" "तो आप ब्रह्माण्ड का चिन्तन कीजिये, बम्बई छोटी हो जायेगी ।" आपकी इस प्रत्युत्पन्नमति पर ही तो अन्य विद्‌वान् व आचार्य बलिहार जाते थे ।

समय का एक भाग और व्यतीत हुआ अब वह वेला आई, जब कोटा नन्दग्राम दुल्हन सा सज गया था । राजपथ पर तोरण द्वारों तथा विविध वन्दन वारों की शोभा देखते ही बनती थी । चारों ओर उत्साह का ज्वार ठाठे मार रहा था । लोग हुलस-हुलस कर गद्‌-गद्‌ कण्ठों से मथुराधीश की जय, मथुराधीश की जय बोल रहे थे । श्री मथुराधीश की सवारी नगर के प्रमुख मार्गों से होती हुई धीरे-धीरे मन्दिर की ओर आ रही थी । कोटा दरबार श्री भीमसिंहजी तथा उनके आत्मज कुँवर श्री ब्रजराजसिंहजी गुरुदेव श्री प्रथमेशजी को आगे पधराये, खुली जीप में प्रफुल्लित थे । ऐसी शोभा, ऐसी सजावट, कोटा में पहले किसी भी अवसर पर नहीं देखी गयी थी । क्यों न हो ? परब्रह्म जब पधारते हैं, तो प्रकृति कैसी आहलादित होकर अपनी सेवाएँ निवेदन करती हैं । गलियों में भीड़ की भीड़ राजपथ की ओर बेतहाशा दौड़ी चली आ रही थी । मार्गों पर दर्शनार्थ खड़े नागरिक परस्पर कन्धे पर कन्धा चढ़ा रहे थे । चारों ओर से पुष्पों की वर्षा हो रही थी । गुरुदेव को माल्यार्पण किये जा रहे थे । विभिन्न वाद्यों के निनाद से कलिकाल का कलेजा बैठा जा रहा था । दिग्‌-दिगन्त से "जय प्रथमेश - जय मधुरेश" की ध्वनियाँ गगन मण्डल को आप्लावित किये दे रही थी । श्री प्रथमेशजी की "अदेय दान दक्ष" वाली परम उदारता की अटूट कृपा का निर्झर झरित हो रहा था । उसी निर्झर में स्नान करता हुआ सा मैं

भावान्दोलित होकर अभिव्यक्त हो उठा ।

भगवान् श्री मधुरेशजी मन्दिर में पधारे "जब नीके दिन आए हैं, बनत न लागि है वेर" वाली उक्ति चरितार्थ हुई । सुबह से शाम और शाम ही क्या अर्द्ध निशा तक वैष्णव मण्डली के कमल वन में रसवर्षण करते, विद्वान पण्डितों का सम्मान समाधान करते । कभी हास्य-विनोद के पुष्प गुच्छों से वह स्थली सुरभित रहती ।.

आगर में अन्तर्राष्ट्रीय पुष्टिमार्गीय वैष्णव परिषद् का सम्मेलन था । महाराजश्री वहाँ पधारे थे । इन्दौर के गो. श्री गोकुलोत्सवाजी महाराज भी थे । उस समय आप श्री ने परिषद के माध्यम से पुष्टि धर्म के प्रचार का युगानुरूप औचित्य बनाते हुए आज्ञा की कि सेवामार्ग को विकसित करना है तो परिषद् में आइये और इसे विश्व में प्रसारित कीजिये। आपश्री के संगठनात्मिका शक्ति व तदनुरूप व्यक्ति की चयनात्मिका शक्ति बेजोड़ थी । कहाँ किस व्यक्ति से कैसा कार्य लिया जाता है । उसी आधार पर आपने संगठन का कार्य कुशल सेनापति की तरह किया । श्रीमान् द्वारका प्रसादजी पाटोदिया, श्री गजाननजी शर्मा जैसे विचारशील विद्वान् अखिल अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर संगठन कार्य में आपश्री के कृपावल से जुट गये । पुष्टिमार्ग का उत्तुंग ध्वज गगन की ऊँचाईयों में सम्पूर्ण दीप्ति के साथ लहराने लगा । मन कह उठा ---

"प्रकट प्रथमेश पुष्टि ध्वज उत्तुंग लिये ।
विपुल देह, नेह निज जन पर बरसात है,
सूखे मरूस्थल से जहाँ भाव लेश नहीं .।
करके कृपा की छाँह कुंज सरसात है ।"

आपश्री ने धर्म संस्कार शिविर आरम्भ किये । कर्मठ कार्यकर्त्ता श्री पाटोदियाजी, डॉ. गजाननजी शर्मा, डॉ. विनोदजी दिक्षित, रेखाबहन सिंघल, श्री मनुभाई आदि ने भारत के कोने-कोने में जाकर इन शिविरों द्वारा वैष्णव जन समुदाय की उठती हुई नई पीढ़ियों को संस्कारित किया । इस प्रकार श्री प्रथमेशजी ने सिद्धान्तों को व्यावहारिक-स्वरूप प्रदान किया । जब-जब आपश्री कोटा पधारते वैष्णवों का हृदय उमंगों से भर उठता । हर्ष का सागर उच्छलित होता । महाराजश्री विश्राम बहुत ही कम लेते । वे बार-बार कहते "अब इस पुष्टिमार्ग का क्या होगा" ? सम्प्रदाय के प्रति ऐसी तड़प क्वचित ही देखने को मिलती है । अन्तिम बार आप जब कोटा पधारे तो मन सागर गम्भीर था । कुछ अद्भुत लग रहा था । व्यवहार मैं परम शक्ति विराजमान थी । उस बार हास्य-विनोद भी नहीं सुनाई दिये । पर कुछ घटित हो जायेगा, ऐसी सम्भावना नहीं ती । और घटित हुआ ही । जब फरीदाबाद से मर्मान्तक समाचार आये तो विकलमन रोता हुआ कह उठा -----

"हुआ तिरोभाव एक विशाल ज्योति - पुंज का,
पुष्टिक के उद्दाम शिखर अति सुदृढ़ व्यक्तित्व का ।"

पू. प्रथमेश जी का विश्व हिन्दू परिषद् के कार्य में अग्रणी योगदान

पं. द्वारका प्रसाद पाटोदिया
भूतपूर्व केन्द्रीय संगठन मंत्री
विश्व हिन्दू परिषद्.

पूज्यपाद आचार्य जी महाराज पुष्टि-सृष्टि के तो आचार्य हैं ही सनातन हिन्दू धर्म के क्षेत्र में भी वे अत्यन्त प्रभावी आचार्य माने जाते हैं ।

सन् 1963-64 में विश्व हिन्दू परिषद् की स्थापना का विचार राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के सरसंघ चालक पू. गुरुजी गोलवलकरजी के समक्ष जब आया और हिन्दू धर्म के जिन 4-5 प्रमुख धर्माचार्यों की बैठक उन्होंने नागपुर में बुलाई तब उसमें पू. प्रथमेश जी महाराज भी पधारे थे और वि.हि.प. के विचार को अपना समर्थन प्रदान किया था ।

सन् 1970 में वि.हि.प. का कोटा (राजस्थान) में हाड़ौती अंचल का अधिवेशन हुआ और पू.प्रथमेशजी ने उस अधिवेशन में अग्रणी भाग लिया ।

ब्यावर क्षेत्र में चौहान राजपूतों के धर्म जागरण कार्यक्रम में, विशेषकर के उनको स्वधर्म में स्थिर करने के कार्य में, पूज्यपाद ने भाग लेकर सबको सामाजिक प्रेरणा प्रदान की ।

जब दिल्ली में विज्ञान भवन में धर्म संसद का अधिवेशन था, तब भी आप वहाँ पधारे तथा एक अधिवेशन की अध्यक्षता भी की ।

वि.हि.प. के केन्द्रीय मार्ग दर्शक मंडल के तो आप प्रारंभ से ही सम्मानित सदस्य रहे हैं ।

जब पिछड़े जिलों में जागृति व सेवा कार्य के लिये उन जिलों की धर्माचार्यों द्वारा दत्तक लिये जाने की योजना वि.हि.प. ने बनाई तो आपने वनवासी बहुत झाबुआ जिला को दत्तक लेकर अन्य धर्माचार्यों के समक्ष अग्रणी उदाहरण प्रस्तुत किया । गत प्रयाग पूर्ण कुंभ के अवसर पर श्री राम जन्म भूमि मुक्ति यज्ञ में भी आपने सोत्साह भाग लिया।

स्वर्ण जयन्ती सभागृह का शिलान्यास

12 दिसंबर 1982

कर्नाटक राज्य के मैंगलोर जिले में एक तीर्थ स्थान है - धर्म स्थल । वहाँ की व्यवस्था विचित्र किन्तु प्रेरक है ।

हमारे दैवी संरक्षक

- श्री कैलाशनारायण खंडेलवाल, ग्वालियर

पूज्यपाद गोस्वामी प्रथमेशजी ऐसे धर्माचार्य थे जो कि दैवी जीवों को शरण में लेने के बाद उनको संरक्षण भी प्रदान करते थे। आपश्री की आज्ञा थी कि जिन्हें हम ब्रह्मसम्बन्ध कराते हैं, उनके प्रति हमारा कर्तव्य हो जाता है कि हम यह भी देखें कि वे गलत मार्ग पर न जावें। वैष्णवों को तथा वैष्णव परिषद् एक कार्यकर्ताओं को निष्ठावान होना चाहिए। 'अष्टाक्षर मंत्र' एवं 'गद्यमंत्र' का केवल उच्चारण न करें उसे अपने जीवन में निष्ठापूर्वक ग्रहण करें। जैसे युधिष्ठिर ने द्रोणाचार्य से कहा कि "अभी भी मुझे कभी-कभार क्रोध आ जाता है, इस कारण 'क्रोध न करो' " यह पाठ याद ही कहाँ हुआ है ? मंत्र का जीवन में निष्ठा बन जाना ही उसका सच्चा स्मरण है।

आपश्री की सुदृढ़ मान्यता थी कि परिषद् की सेवा हरि-गुरु-वैष्णव तीनों की सेवा है। सेवा लेने की प्रवृत्ति न रखें। सेवा तो की जाती है, ली नहीं जाती। इसी प्रकार आप सेवा के समय, व्रज यात्रा, परिषद् की बैठकों आदि में 'गणवेश' (धोती-बगल बंडी, तुलसीमाला, तिलक आदि) का भी वे बहुत आग्रह रखते थे। आपका मत था कि वैष्णवोचित परिधान और सिद्धान्तों का जीवन में अनुसरण करके हम सब कुछ पा सकते हैं, अन्यथा नहीं। आज के वैष्णवों के सम्बन्ध में आपका मत था कि यदि कोई शेर का बच्चा रास्ता भटक कर गीदड़ों के झुंड में जा मिले और गीदड़ जैसी चेष्टा करने लगे तो भी वह वस्तुतः गीदड़ रहेगा या शेर ? प्रभु-कृपा से उसे अपने स्वरुप की स्मृति होगी।

अपरस का अर्थ आपश्री मानते थे - प्रभु के साथ अरस-परस। आपश्री की आज्ञा थी कि अपरस जीवन में अवश्य रहे लेकिन ऐसा न हो कि उसका वास्तव अर्थ न समझ कर अपरस के ही हो जावें और प्रभु को भूल जावें। हर क्षण प्रभु के सुख का ध्यान रखना चाहिए। इसी प्रकार आपश्री गृहसेवा को सर्वाधिक महत्व देते थे। आपश्री की आज्ञा थी कि यदि प्रभु सान्निध्य पाना है तो केवल अपने घर बिराजे ठाकुरजी का ही प्रसाद लो। जो कुछ भी अपने ठाकुरजी को धराओ, वही ग्रहण करो।

परिषद् के कार्यकर्ताओं को आपश्री सदैव प्रेरणा देते रहते थे। आपश्री ने एक बार इस सेवक को धर्म के क्षेत्र में समर्पित होकर कार्य करने की प्रेरणा देते हुए आशीर्वादात्मक मंगल आज्ञा की कि यदि तेरा घर नहीं छुड़ा दिया तो मेरा नाम भी प्रथमेश नहीं। आप की स्पष्ट आज्ञा थी कि जब सब कुछ प्रभु को समर्पित कर दिया है तो फिर 'इज्जत का टोकरा' अपने सिर पर क्यों लादे हुए हो? उसे प्रभु के चरणारविन्दों में समर्पित कर दो और कृतार्थ होकर सुख की जिन्दगी जीओ। **वैष्णवों के तो आप दैवी संरक्षक ही थे।**

आपश्री श्री ठाकुरजी के सुख को सर्वोपरि महत्व देते थे। सत्ता या धन के सम्मुख

धर्म कभी न झुके इस दिशा में आप सदैव सावधान और सचेष्ट रहे। 1980 में उज्जैन के सिंहस्थ के अवसर पर एक धनिक ने भीतरिया से कहा कि दस हजार रुपये ले लो और कल ही मेरी ओर से श्री ठाकुरजी का मनोरथ कर दो क्योंकि मुझे दूसरे दिन वापस जाना है। भीतरिया रुपये लेकर आपश्री के पास गया। आपश्री ने रुपये केम्प के बाहर फिकवा दिये और आज्ञा की - ''प्रभु किसी के गुलाम नहीं हैं। प्रभु का मनोरथ किसी की इच्छा और सुविधा के अनुसार नहीं हो सकता।''

नित्यलीला में प्रवेश के बाद भी आपश्री की दैवीकृपा के अनेक प्रसंग अनेक महानुभावों के जीवन में घटित हुए हैं। मेरे स्वयं के जीवन के प्रसंगों का उल्लेख न करते हुए एक अन्य अलौकिक प्रसंग यहाँ प्रस्तुत करता हूं। इन्दौर में पूज्यपाद गोस्वामी देवकीनन्दनाचार्यजी की बहूजी के सन्तान का प्राकट्य होने वाला था। डॉक्टरों की राय थी कि बालक टेढ़ा है अतः ऑपरेशन करना पड़ेगा। सभी चिन्तित थे। प्रातः ब्रह्ममुहूर्त में एक वैष्णव को स्वप्न आया कि नित्यलीलास्थ पूज्यपाद प्रथमेशजी उसके घर पधारे और आज्ञा की कि ''देवकीनन्दनजी से कहदो कि चिन्ता न करें मैं उनके घर पधारुँगा।'' एक अन्य वैष्णव को स्वप्न आया कि धूमधाम से नन्दमहोत्सव मनाना। वैष्णवों ने आकर पूज्यपाद गो. श्री देवकीनन्दनजी महाराज को बधाई दी। बहूजी के लालन का प्राकट्य सुखपूर्वक और बिना ऑपरेशन के हो गया। ऐसे थे पूज्यपाद प्रथमेशजी महाराज **हमारे दैवी संरक्षक।**

तुलसी की पवित्र माला हमेशा स्मरण कराती है कि हम प्रभु के प्रिय शरणागत है. हमने स्वतः ने प्रभु की सेवा के लिये आत्म समर्पण किया है, प्रभु ने हमें स्वीकारा है, यही प्रभु की हम पर कृपा है इसलिये हमारे आचार और विचार सेवा के लिये उपयोगी हों ऐसी आस्था हमेशा रखना चाहिए.

- प्रथमेश

विपरीत परिस्थिति में अथवा तो सम्बन्धियों के द्वारा दुष्टता के व्यवहार के समय यही विचार करना चाहिये कि प्रभु संसार के प्रति हमारी आसक्ति दूर करना चाहता है.

- प्रथमेश
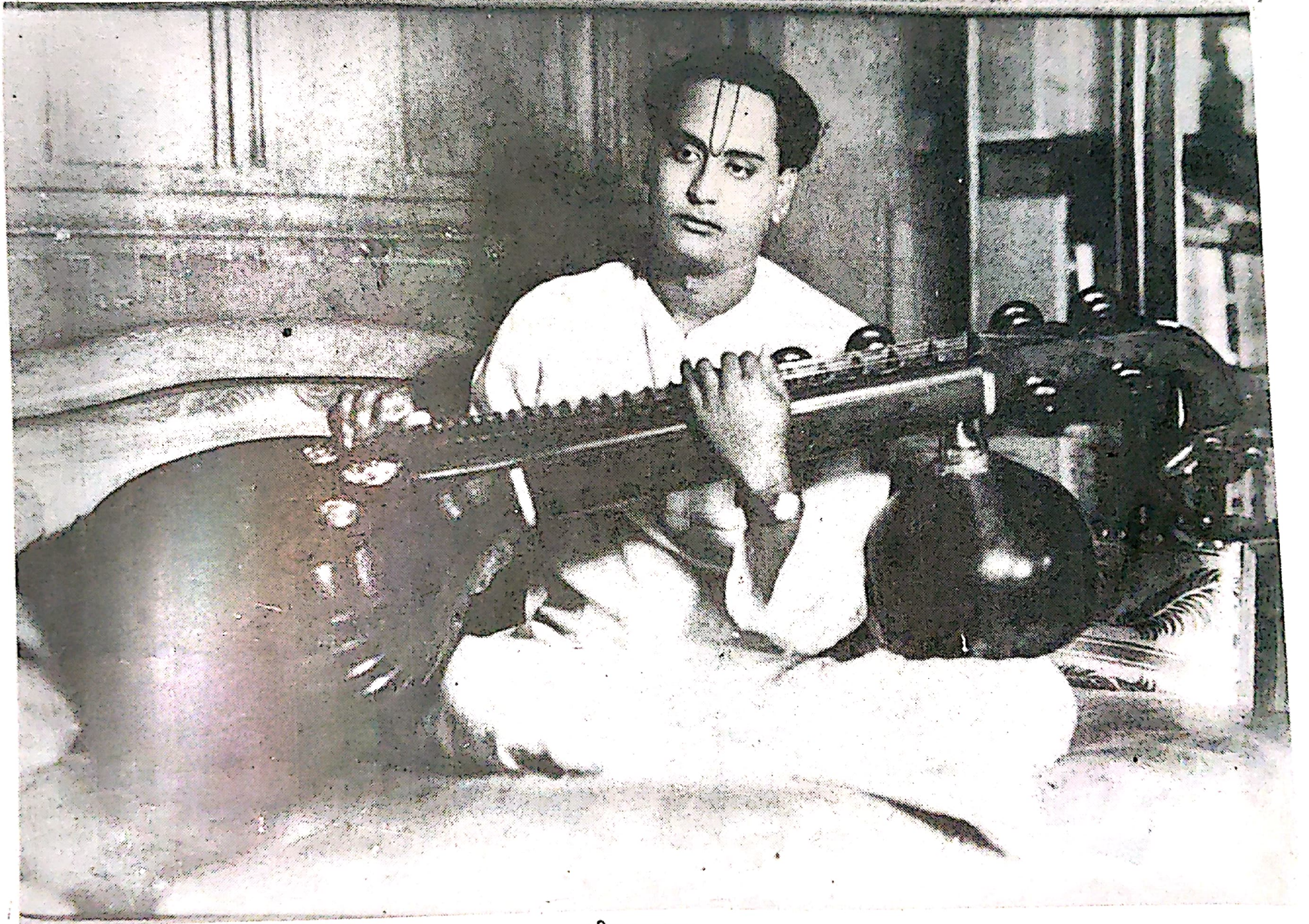
वीणावादन

सितार के तारों पर स्वर साधना
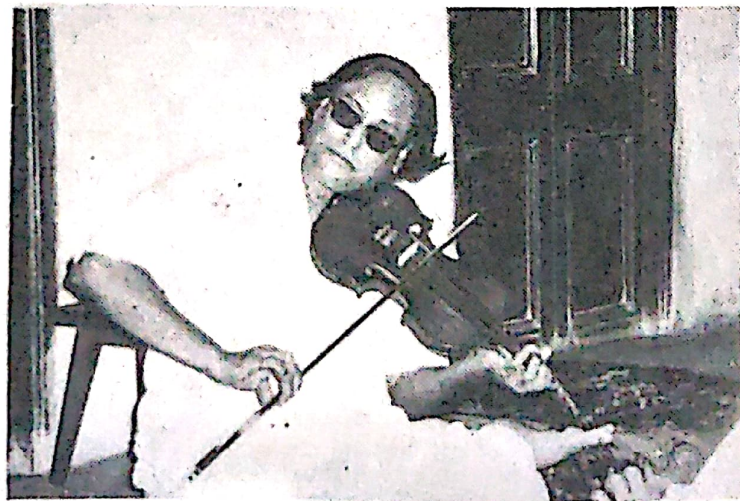
वायलिन

नाल में ताल

नाद ब्रह्म की उपासना

हारमोनियम : स्वर साधना